''ताना औं बाना यदि टूटे
वे तो फिर भी जुड सकते हैं
मन औं दर्पण ही ऐसे हैं
जो न कभी भी जुड सकते हैं
चाहे पाप करो तुम जितना
लेकिन ख्याल रहे बस इतना
कोई भी दर्पण ना टूटे
कभी किसी का मन ना टूटे।''

प्रकृति एवं जल को महत्वपूर्ण बताते हुए कवि उनकी आवश्यकता पर भी गीत लिखते है।

(१०) बूँद बूँद पारा (१९९६) : सन् १९७९ में प्रकाशित बूंद बूंद पारा में जिन्दगी के विविध रूपों को गम्भीर चिन्तन के परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत किया गया हैं। इसमें युगीन स्थितियों की विपरीतता के बावजूद आस्था के संदर्भो को व्यक्त किया गया है और प्रेम तथा सौन्दर्य जैसे प्रेरक तत्वों की विस्तृत चर्चा कर कवि ने अपने मन की समर्पित भावना व्यंजित की है।

भारत एक धर्मप्रधान देश है यहाँ के लोगों को धर्म के नाम पर आपस में लडवाना सर्वाधिक आसान है। इसलिए कवि ने मजहब के आधार पर लडाई करवाने वालों पर कटाक्ष करते हुए कहता हैं कि –

आ रही है खत की फिर गंध
भूख हिंसा की न होती मंद
नष्ट हो न जाये मनु की नस्ल
शान्ति के साधक! बहुत हुशियार रहना तुम

(११) सन्नाटे की चीख (१९९६) : इस संग्रह में कवि ने उन गुमनाम व्यक्तित्वों को याद किया है जिन्होंने स्वतन्त्रता संग्राम और देश हित के लिए स्वयं को समर्पित कर दिया, पर जिन्हें कोई जानता नहीं। उनके इस त्याग के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करते हुए कवि कहतें हैं कि जिस प्रकार नींव के पत्थर के बिना भवन की कल्पना नहीं की जा सकती, उसी प्रकार उन गुमनाम योद्धाओं के बिना स्वतन्त्र भारत की कल्पना भी नहीं की जा सकती। आज भी अनजान गलियों की धूल में अपना जीवन गुजारने वाले इन योद्धाओं के त्याग को देशवासियों के सामने लाने का प्रयास करते हुए कवि कहते हैं कि–

''रहकर अनाम यौद्धा, बिन शस्त्र–बिन कवच के
अस्तित्व की लडाई जो उम्र भर लडे हैं
वे हाँ नहीं पुरस्कृत,पर लोकमान्य तो हैं
कतिपय बडे–बडों से वे आज भी बडे हैं
वे, जो अजान गलियों की धूल में पडी हैं
उन आबदार मणियों के कद्रदान हम है।''

राष्ट्रभाषा की उपेक्षा पर प्रहार करते हुए कवि कहतें हैं कि स्वतन्त्रता प्राप्ति के समय हिन्दी ने ही सारे राष्ट्र को एक सूत्र में बाँधा था पर आजादी के बाद हम लोगाों ने हिन्दी को अनदेखा करना शुरु कर दिया और अंग्रेजी को पटरानी के सिंहासन पर प्रतिष्ठित कर दिया।

''हिन्दी अब भी उपेक्षिता है, अंग्रेजी पटरानी है
करुण कहानी रही देश की अब भी करुण कहानी है
यही दुर्दशा आज देश में प्रतिभा की हत्यारी है।''

(१२) गाओ कि जिये जीवन (२००३) : विराट एक ऐसे गीतकार है जो समकालीन परिदृश्य को दृष्टिगत रखकर आधुनिक मनुष्य के जीवनानुभवों को व्यक्त करने के लिए भाषा, भाव,श्शैलीगत प्रयोग करने का साहस रखता हैं। आज के इस मशीनी युग में जीवन को जीना भी एक चुनौती हैं, पर ऐसे संकट और दुविधाग्रस्त समय में हारे–थके मन को विराट के ये गीत सांत्वना और हौंसला देते है, क्योंकि इन गीतों में कवि मानस की संवेदनाएँ समाहित हैं। जीवन के विविधवर्णी प्रतिबिम्ब और सामयिाक प्रसंगों के अक्स गीतों कें बार–बार उभरे हैं, जिन्हें अपनी लेखनी से पारस स्पर्श देकर कवि ने उन्हें स्वर्णिम आभा ही नहीं दी है, अपितु प्रात:कालीन खिले ताजे फूलों की सुगन्ध भी उनमें भर दी हैं।

प्रेम की शर्त पहली रही है यही
व्यक्ति अपने अंह का विसर्जन करे
हो समर्पित, बिना प्रश्न, जरिवाद के
सौंप विश्वास, विश्वास अर्जन करें
बाह्य– अंतर प्रकाशित नहीं आपने
दीप को देहरी जलाया नहीं।

उक्त पंक्तियों में गीतकार ने कहा है कि प्यार करने के लिए जरूरी है कि व्यक्ति बिना अंह को

त्यागे, बिना समर्पण किये सफल नहीं हो सकता। कवि पर्यावरण के प्रति भी सजग और चिन्ताशील हैं। मिट्टी, पानी और वायु प्रदूषित हो चुके हैं। कवि पृथ्वी के भावी विनाश के प्रति चिन्ता व्यक्त करता है। विदेशों में रहने वाले प्रवासी भारतीयों के दर्द को कवि व्यक्त करता है।

(१३) सरगम के सिलसिले (२००८) : यह गीत संकलन राष्ट्रप्रेम से सम्बन्धित है। इस संकलन में १५२ गीतों का संग्रह किया गया है। साहित्य की मंगलाचार पद्धति का निर्वाह करते हुए इस गीत संग्रह में प्रारम्भिक गीत ईश वन्दना के संकलित है। तत्पश्चात जल जीवन के लिए अनिवार्य है। इसलिए नदियाँ भी ईश स्वरूपा ही है। अत: मातृभूमि इन्दौर में प्रवाहमान नर्मदा एवं क्षिप्रा नदी की गरिमा को शब्दांकित करने का प्रयास किया गया है।

नव वर्ष का अभिनन्दन करते हुए शहीदों एवं देशप्रेम के उत्कृष्ट गीतों का संग्रह किया गया है। 'कोई रूदन नहीं सुनता' गीत में कवि कहते हैं कि गीत वेदना से जन्म लेता है,पर श्रोता गीत के स्वर सुनकर मन्त्रमुगध तो होते है, पर गीत में छिपे गायक के अव्यक्त रूदन को कोई नहीं सुनता है। उदाहरण:-

''गीत सुनते सभी गायक का
कोई रूदन नहीं सुनता है।
सीने में सिसकियाँ दबाकर
गीत अधर पर लाया करता।
कौन वेदना उसकी लेकिन
अपने अन्तर में गुनता है।''

विकास के इस युग में भी बाल मजदूरी करने को मजबूर अपना बचपन खो चुके बच्चों के प्रति संवेदना प्रकट करते हुए श्री विराट जी कहते है कि -

''अपना बचपन गवाँ गये बच्चे
कितनी जल्दी बुढा गये बच्चे।''

(१४) ओ, गीत के गरुड (२०१२) : संकलन में८१ गीतों का संग्रह किया गया है।

निष्कर्ष : सन् १९६९ में प्रकाशित संकलन स्वर के सोपान और ओ मेरे अनाम विराट के गीतात्मक रुझान और चिन्तन के प्रारम्भिक चरणो को प्रदर्शित करने वाले संकलन हैं। इन संग्रहों में कवि अत्यधिक भावुकता के परिवेश में जहाँ एक ओर प्रेम, सौन्दर्य और दर्द का निरूपण करते हैं, दूसरी ओर इनमें राष्ट्रीयता और नवनिर्माण के विविध रूपात्मक संदर्भ भी प्रकट हुए हैं। इस अध्याय में विराट के गीतों

में समसामयिक चिन्ता एवं चेतना को विविध दृष्टिकोण से देख सकते हैं। गाँवों का पिछडापन, किसानों की विपन्नता, श्रमिकों का दोहन, लालफीताशाही, महँगाई, बेरोजगाारी, जातिवाद, पश्चिमी सभ्यता का अन्धानुकरण, राष्ट्रीय भाषा की उपेक्षा, राजनीति का पतन, दुख सुख का विषम अनुपात, पारिवारिक बिखराव, अनास्था- निरपेक्षता, अविश्वास, युवाओं में नशा प्रवृत्ति, आतंकवाद, धार्मिक उन्माद, साम्प्रदायिक वैमनस्य, कामचोरी, उपभोक्तावादी संस्कृति, आधुनिक जीवन का दम्भ, निरंकुश विधायिका आदि सम्पूर्ण स्थितियों का सूक्ष्म अन्वेषण कर कवि अंत में एक आशावादी स्वर जगाता है। विराट जी की रचनाओं में एक सपाटबयानी है, चोट करने की क्षमता है, प्रकृति श्रृंगार की वर्णनात्मकता है। अध्यात्म का आत्मपरक विराट- गीतों का भाव-वैभव, रस- लालित्य तथा भाषिक सौष्ठव इनके गीतों में दिखाई देता हैं। विराट का गीतबोध जीवन और उससे जुडे युग सत्यों को पूरी तरह बाँधे है। संवेदनाओं की वैचारिक बुनावट में वे पूर्ण निपूण है। कवि पहले हर पक्ष, हर दृष्टि से तथ्यों की कटाई करता है, समय की छलनी में उसे छानता है, युग संदर्भो में भावों की धुलावट कर व्यक्ति और समाज से जुडे सरोकारों को बुनकर, कुशल शिल्पी बनकर उन्हें तराशता और गढता है। समस्याओं के प्रति उनकी यर्थाथवादी दृष्टि परिलक्षित होती है। सामाजिक चेतना के प्रति उनकी सजगता संघर्ष का रास्ता दिखाती है। उनके गीतों में सामाजिक परिवर्तन की अदम्य आकांक्षा मुखरित हुई है। वे अवतारवाद और ईश्वर की सत्ता पर विश्वास करते है, पर विश्वास तो करते है, पर व्यक्ति को स्वयं पर विश्वास करने के लिए भी प्रेरित करते हैं क्योंकि ईश्वर भी उसी की सहायता करते हैं जो अपनी सहायता स्वयं करते हुए दूसरों पर निर्भर नहीं रहते हैं। कवि विराट ने जीवन के सुख-दुख, राग-विराग, प्रेम-विरह के गीत गाते रहने पर भी देश एवं समाज की उपेक्षा नहीं की हैं। देश के प्रति अपना दायित्व निभाते हुए - युग चेतना के स्वर उनके गीतों में मुखरित होते रहे है।

गीत की इस सनातन सामर्थ्य से चन्द्रसेन विराट भी प्रभावित हुए। अपने मन की प्रवृतियों के अनुसार अन्य विधाओं की अपेक्षा कठिन होते हुए भी गीत विधा उन्हें अपने अधिक निकट और अनुकूल लगी। इसलिए उन्होंने गीत को अपनी रचना शक्ति समर्पित की। अपनी रचना प्रक्रिया को स्पष्ट करते हुए उन्होंने स्वर के सोपान की भूमिका में लिखा है- मेरे गीतकार के मन के तहखाने में न जाने एक बाँसुरी क्यों है? सासों की वायु पर बजना इस बाँसुरी का स्वभाव हैं, नियति है। गीत के प्रति मेरी आस्था अटूट है, यह मेरे कवि मन की प्रकृति हैं। अन्य विधाओं ने इतने लालच दिये, प्रतिष्ठित करने के कौल भरे, मगर मेरा कवि मन अभी भी उस गीत वाली बाँसुरी का आशिक है। विराट के ये उद्‌गार बताते है कि वे अन्य

विधाओं की ओर गतिशील हो सकते थे, किन्तु उनके मन की स्वाभाविक प्रकृति को गीत ही प्रिय लगें, इसीलिए उन्होंने अपनी अटूट आस्था गीत को समर्पित की है।

किन्तु कुछ समय बाद ही श्री विराट के काव्य ने पुन: एक ओर मोड लिया और युग बोध के प्रति अपने दायित्वों का अनुभव करते हुए उन्होंने गीत की अपेक्षा गजल जिसका नाम उन्होने मुक्तिका रखा है; को महत्तव दिया और उसके लेखन में रत हो गये थें। निर्वसना चाँद्रनी के आत्म कथ्य में ये बाँतें स्पष्ट रूप से स्वीकार की है कि गजल युगबोध की काव्यात्मक अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम हैं, साथ ही अभिव्यक्ति के सामान्यीकरण की प्रवृति गजल में गीत की अपेक्षा अधिक होती हैं। गजल के इसी तेवर का मैं आशिक हूँ और चुंकि अभिव्यक्ति के सामान्यीकरण के प्रति मेरी लालसा हैं, अत: गजल की पीठिका पर ही मुक्तिका हिन्दी गजल के प्रति मेरी समस्त गीतात्मक आस्था संघर्षशील हैं।

इसका तात्पर्य यह है कि पहले गीत के प्रति विराट की आस्था इतनी प्रबल थी कि उन्होंने उसके लिए अन्य विधाओं का भी तिरस्कार कर दिया, किन्तु बाद में गीत की इसी आस्था ने मुक्तिका को स्वीकार किया और वह भी यह मानकर की विराट जो कुछ कहना चाहते हैं उसमें गीत की अपेक्षा मुक्तिका ही सक्षम हैं। विराट की यह उलझन यह सोचने को विवश कत देती है क्योंकि इतना स्वीकारने के बाद उन्होने फिर से गीत लिखे। इस अनुभूति के बाद भी वे गीत और गजल दोनों को समानान्तर लेकर चले हैं। प्रतीत होता है कि गीत के प्रति उनकी टूटती आस्था फिर अपने पूर्ववत अटूट स्तर पर पहुँच गई है और मुक्तिका लेखन इसका सहयात्री बना हैं।

वस्तुत: विराट गीतकार है– एक समर्थ गीतकार, जिन्होने नवगीत की अपनी साधना से वास्तविक अर्थ प्रदान किया और हिन्दी नवगीत की साठोतरी परम्परा को गति प्रदान की। अत: श्री नीरज के शब्दों में कहा जा सकता है कि– गीत के लिए पूर्णत: समर्पित एक उज्जवल हस्ताक्षर । आडम्बरों एवं औपचारिकता से परे मानवता के सरल रूप का समर्थक गीतकार । किसी वाद से नहीं जुडा, किसी खेमें में शामिल नहीं हुआ, किसी मठ में प्रवेश नहीं किया उसने। एकाकी अलख जगााया हैं। इस प्रकार विराट से गीत और गीत से विराट उपकृत हुए हैं। दोनों को भिन्न करना मुश्किल हैं। कवि स्वयं कहता हैं–

सुन विराट, तू लाख कहे
पर मुझको है मालूम कि निश्चित तुझसे गीत नही छूटेगा।

गीत के प्रति ऐसा समर्पित भाव विराट के कवि व्यक्तित्व का महत्तवपूर्ण बिन्दु है। चन्द्रसेन विराट एक स्वाभिमानी गीतकार है। कर्म से यांत्रिक और धर्म से गीतकार। विराट के व्यक्तित्व की ही विशिष्ट

विशेषता है कि बौद्धिक परिवेश और भावात्मक सागर जैसे भिन्न क्षेत्रों को न केवल एक माना अपितु एक के कार्य में दूसरे का प्रचुर सहयोग भी लिया। ऐसा माना जाता है कि कवि भावुकता में शिल्प का ध्यान नही रखता, पर विराट का यांत्रिक व्यक्तित्व इस कमी को पूरा कर देता हैं। उनके गीत और मुक्तिकाएँ शिल्प की दृष्टि से इसलिए कमजोर महसूस नहीं होती। सम्भवत: यांत्रिक रूप से कर्म करते हुए भी उनका कवि व्यक्तित्व वहाँ की कमी को भी पूरा करता होगा और संवेदना रहित स्थलों पर अपनी संवेदना उडेलता हुआ मनुष्य के मूल रूप को बताता होगा। उनके व्यक्तित्व की इस विशेषता ने उन्हें लोकप्रिय बनाने में बहुत सहयोग दिया है तो किसी ने उसे नूतन अर्थ में स्वीकार कर अन्यान्य विषयों पर अपनी लेखनी चलाई । विराट की गजलें भी दोनो रूपों में उपलब्ध होती हैं और सारी भीड के बीच उन्हें इस दिशा में उन्हें लेखनी चलानें के कारण उपलब्धियाँ भी प्राप्त हुई हैं । इस सन्दर्भ में श्री भवानी प्रसाद मिश्र ने विराट के काव्य संकलन किरण के कशीदे में लिखते है कि – गीतों में प्रयोगवादी भी कम नहीं हुए हैं। बहुत लोग प्रयोग कर रहे हैं। प्रयोगों की परम्परा लगभग है ही नहीं बलबीरसिंह रंग को छोड दे तो कहने लायक गजल किसी की कलम से नहीं निकली, पर उनकी हिन्दी गजल में भी कसर यह है कि वह हिन्दी गजल कम, उर्दू गजल ज्यादा है। इस कमी को ठीक ढंग से यदि किसी ने पूरा किया है, तो वह चन्द्रसेन विराट ने।

किन्तु जैसा कि पूर्व में ही वर्णित किया जा सकता है कि उन्होंने गीत अधिक लिखें है, ग़ज़लें कम। ऐसी स्थिति में उन्हें गजलकार न कहकर मूलत: गीतकार कहना अनुपयुक्त नहीं होगा। श्री भवानी प्रसाद मिश्र ने अपने उपर्युक्त मत में ग़ज़ल को गीत का ही पर्याय माना हैं। दोनों ही निजी अनुभूतियों पर आधारित लयात्मक रचनाएँ है, जो प्रबल भावात्मकता और वैयक्तिता से युक्त, संक्षिप्त, स्वतन्त्र और मुक्तक होती हैं। दोनों में अन्तर सिर्फ इतना है कि गीत में ही एक विचार, भाव या परिस्थिति का आद्यन्त चित्रण होता हैं, जबकि ग़ज़ल या मुक्तिका का प्रत्येक पद स्वतंत्र होता है। गीत में प्रत्येक पद की पंक्तियाँ दो से अधिक होती हैं, जबकि ग़ज़ल का प्रत्येक शेर दो पंक्तियों का होते हुए भी अपनी स्वतंत्र इयता रखता हैं अर्थात गजल के चन्द शेर से अधूरेपन का एहसास नहीं होता जबकि गीत का एक अंश सुनने पर अधूरेपन का एहसास होता है।

गीत के प्रति समर्पित श्री चन्द्रसेन विराट अपने स्वभाव की मिलन सरिता से, सरलतम् व्यक्तित्व से, अनवरत साहित्य साधना से तथा स्वर के सम्मोहन से देश व्यापी ख्याति प्राप्त कर चुके हैं। जीवन के कठोर यांत्रिक यर्थाथ को भोगते हुए भी विराट के गीतों की रसधारा आस्था, शक्ति, निष्ठा, ताजगी, उल्लास और सहज प्रेषणीयता से सम्बद्ध होकर निरन्तर प्रवाहमान रही हैं।

गजल संग्रह :

(१) निर्वसना चाँदनी : सन् १९७० में प्रकाशित निर्वसना चाँदनी में कवि की अनुभूतियों को प्रखरता तथा विस्तृति मिली हैं। सुख के सूरज निर्वसना चाँदनी तक तय की हुई जीवन यात्रा सुख-दुख के अनेक पडावों पर ठहरती हुई भी गतिशील हैं। इसमें जीवन के अनेकानेक संदर्भ सार्थकता के साथ अभिव्यक्त हुए है। सौन्दर्य दृष्टि, रागात्मकता, सुख- दुख की अभिव्यक्ति, प्रकृति की विराट अभिव्यंजना के साथ ही महानगर बोध और आस्था के संदर्भ आदि मिलकर प्रस्तुत संकलन को श्रेष्ठता प्रदान करते हैं।

इसमें कवि की अनुभूतियों की प्रखरता तथा विस्तृति मिलती है. सुख के सूरज निर्वसना चांदनी तक तय की हुई जीवन- यात्रा सुख-दु:ख के अनेक पडावों तक ठहरती हुई भी गतिशील है। इसमें जीवन के अनेकानेक संदर्भ सार्थकता के साथ अभिव्यक्त हुए है. भवानी प्रसाद मिश्र ने लिखा है कि -

''हिन्दी में ग़ज़ल की परम्परा लगभग नहीं के बराबर है। भाई रंग को छोड दें तो कहने लायक गजल किसी की कलम से नहीं निकली, पर उसकी हिन्दी ग़ज़ल में भी कसर यह है कि हिन्दी गजल कम उर्दू गजल ज्यादा है। इस कमी को ठीक ढंग से अगर किसी ने पूरा किया हैं तो वह चन्द्रसेन विराट ने। एक कठिन काम हिन्दी ग़ज़ल के क्षेत्र में यह किया कि बहरें उर्दू की लेकर भी उच्चारणों में उर्दू की तरह दीर्घ को ऱ्हस्व कदाचित ही पढना पडता है। रदीफ काफिये भी नये-नये चुने हैं और उन्हें खूबी से निभाया हैं।''

(२) आस्था के अमलतास : सन् १९८० में प्रकाशित आस्था के अमलतास में सौन्दर्य, प्रेम एवं दर्द की त्रिवेणी में बहती रसधारा जीवन के अनेकानेक प्रसंगों, उसकी छोटी से छोटी घटना उसके सुख-दुख का एक एक प्रकरण प्रस्तुत करती है। मिथ के अनेक स्तरीय बहुल प्रयोग कवि के काव्य -कौशल की महत्वपूर्ण उपलब्धि है। संघर्ष शील मनुष्यों के विषय में वे कहते है कि-

''चोट समय की खाकर देखों टूट गये है कितने लोग
साथ चले थे लेकिन पीछे छूट गये है कितने लोग।
कौन हिसाब लगााकर देखे कितनों से रूठा जीवन
और कभी अपने जीवन से रूठ गये हैं कितने लोग।
सुख की खुशफहमी में अक्सर दुख ही भोगा लोगों ने
अमृत के धोखे में विष भी घूँट गये हैं कितने लोग।''

(३) कचनार की टहनी : उन्होंनें उर्दू गजल के छन्द एवं संरचना को स्वीकार करते हुए हिन्दी गजल को हिन्दी की सांस्कृतिक पीठिका पर तराश कर एक विशिष्ट व्यक्तित्व प्रदान किया। मानवीय जीवन की विवशताओं को चित्रित करते हुए गजलकार कहता है कि–

'' हर दशा में महफिलों का हृदय बहलाना पडा
रो पडे हसँते हुए रोते हुए गाना पडा
मंच की हर नाटिका जारी रहे बस इसीलिए
नायकों से विदूषक तक पात्र अपनाना पडा।''

(४) धार के विपरीत : हिन्दी गजल को मुक्तिका नाम देने वाले गजलकार ने हिन्दी की बहुआयामी क्षमता को दर्शाने हेतु मुक्तिका के काव्य प्रयोगों को समर्पित रहे।

''आप ही कहिए उन आश्वासनों का क्या हुआ
छोडिये किशमिश गरीब के चनों का क्या हुआ
स्वप्न तो पक्के मकानों के दिखाए थे कभी
हाय कच्चे झोपडों का , आँगनों का क्या हुआ।''

(५) परिवर्तन की आहट : इस संग्रह में उनकी नवीन मुक्तिकाएँ संग्रहित है–

'' पाने का देवत्व चला था, किन्तु दनुजवा हाथ लगी
क्या विडम्बना है यह मानव, मानव भी अक्सर न रहा
अनाचार, बर्बरता, शोषण,जुर्म, घृणा, अन्याय, समर
लगता बीसवी सदी में दुनिया का ईश्वर न रहा।।''

(६) लडाई लम्बी है : उर्दू पारम्परिक गजलों से अलग, विशिष्ट हिन्दी सांस्कृतिक पीठिका से लिप्त,कहने के तेवर, शिल्प में श्शालीनता, शैली की शास्त्रीयता, मिथकों का मार्दव समेटे हुए उनकी मुक्तिकायें स्वयं बोलती है। वे लिखते है –

''हिन्दी गजल की बात चली तो तुम्हें विराट
उद्धृत करेंगें लोग मिसालों के नाम पर''
कृषक की दुर्दशा पर कवि लिखता है:–
''दिखता खडा अकाल सामने मुँहबाये
होगा हाहाकार कि मेघा पानी दे

कृषक दुखी माथे पर हाथ धरे बैठे
करते विचार कि मेघा पानी दे।''

(७) न्याय कर मेरे समय : इस संग्रह में उनकी गजलें समय के यथार्थ को समग्रता के साथ पकडने और उसकी भावनात्मक अभिव्यक्ति में विश्वास रखती है। प्रेम के बदलते स्वरूप पर वे लिखते है–

''पैर राहु ने पकड रखे हैं,
केतु सिर पर सवार है भैया
प्यार कहते है आजकल जिसको
वसना का विकार है भैया।''

(८) फागुन माँगे भुजपाश : इस संग्रह की गजलों में बीसवी सदी के वैचारिक परिवेशों के अनुरूप भारतीय जीवन के प्रतीकों, बिम्बों और मिथकों के प्रयोगों से नितान्त नवीन क्षितिज उद्‌घाटित किये है। जैसे रेत बन्द मुठ्ठी से भी फिसलती जाती है, वैसे ही जिन्दगी को पकडने की कोशिश में वो हाथ से निकलती जाती है।

''ये रोज–रोज उम्र गुजरती चली गई
ज्यों रेत मुठ्ठियों से बिखरती चली गई
जिस रोज जन्म हुआ उसी रोज से सतत
इस जिन्दगी को मौत कुरतती चली गई।''

(९) इस सदी का आदमी : समय की नब्ज पर उँगली रखते हुए यथार्थ को समग्रता में ग्रहण करते हुए आज के मनुष्य के भावों, अनुभावों, वेगों– सवेंगों को विशिष्ट शैली शिल्प के साथ व्यक्त करती हुई उनकी हिन्दी ग़ज़लों का सफर शुरू है।

(१०) हमने कठिन समय देखा है : स्वभावगत मूल हिन्दीपन के साथ तत्समी संस्कारयुक्त भाषा, भाव की बनावट ऐसी हो, जिसमें हिन्दी की तीनों भाषा– शक्तियाँ, पूर्ण सौष्ठव के साथ प्रयुक्त हों जो गठी हुई प्रभविष्णु एवं विशिष्ट हिन्दी व्यक्तित्व के साथ उसकी अस्मिता को उजागर करती हुई प्रतीत होती है।

''कालचक्र का नित आवर्तन होता जाता है
परिवर्तन पर फिर परिवर्तन होता जाता है।''

उपसंहार : इन संकलनों के अतिरिक्त अन्य अनेक स्थानों से भी विविध पत्र-पत्रिकाओं में भी विराट जी के गीत प्रकाशित हुए है और निरन्तर होते आ रहे हैं। इस प्रकार लगभग ६० दशकों से अनवरत साधनारत विराट प्रसिद्ध गीतकार नीरज के शब्दों में कृतिव से विराट ही बने हुए है।

श्री चन्द्रसेन विराट के गीत अनुभूत जीवन की ही अभिव्यक्ति नहीं करते, बल्कि उस अभिव्यक्ति को आधुनिकता के विविध आयामों से अलंकृत कर वर्तमान के प्रति अपने दायित्व को निभाते है। उनके गीतों में गीति तत्वों की समस्त विशेषताएँ अपने सहज रूप में विद्यमान है। उन्होने जहाँ परम्परा को स्वीकारते हुए शाश्वत मूल्यों के प्रति अपनी भावनाएँ समर्पित की है, दूसरी ओर आधुनिक चेतना के स्वरों को मुखर कर परिवर्तित मानव मूल्यों को स्वीकार करते हुए परम्परा के परिष्कृत रूप से नवता का सहज सम्मिलन कराया है। इस प्रकार उनके काव्य में केवल भावुकता ही नही, बौद्धिक विकास के चिन्ह भी स्पष्ट रूप से दिखाई देते है। उनके गीतों में एक ओर हृदय की कोमलतम अनुभूतियों का प्रकटन हुआ है, तो दूसरी ओर कठोर वास्तविकताओं से साक्षात्कार करने वाली स्थितियों का चित्रण भी। मनुष्य के आधुनिक तनाव, कुठाएँ, संशय, अभाव एवं उसके सभी संवेग उनके सही परिवेश में कलागत ताजगी के साथ, सहजता के साथ अभिव्यक्ति पायें- यही विराट के गीतों का प्रयत्न है।

४.२ विराट के गीतों की प्रवृतियाँ :

विराट के गीतों में अनुभूतियों की रंगच्छायाओं को उद्‌घाटित करते हुए श्री ओमप्रभाकर ने लिखा है कि विराट के गीतों में उपलब्ध होता है - आज के आदमी का अस्तित्वबोध, उसकी निजी पीडाएँ, समूह प्रश्न, प्रेम-विराग, यांत्रिकता के दबाव में छटपटाती मानवीय संवेदना, कुंठा, दामपत्य जीवन के अछूते जीवन्त क्षण, अपराजेय मनुष्य का उदग्र अंह, मानवीय रिश्तों के बीच अनकही टूटन, शाश्वत आस्था, जातीय प्रकृति के बहुवर्णी धडकते चित्र आदि। इस प्रकार विराट के काव्य की विषयवस्तु विविधात्मक है, किन्तु हर जगह संतुलन एक सा, और वह भी उत्तरोतर प्रगति की ओर गतिशील। उन्होंने जीवन के विविध पक्षों का रूपायन किया है, जिसमें गोपाल दास नीरज के अनुसार-अनुभूति की तीव्रता के साथ अभिव्यक्ति के संयम का एक साथ निर्वाह हुआ है। यह निर्वाह कुशल कवि के लिए ही संभव है और विराट ने यह उपलब्धि अर्जित की है। वस्तुत: विराट के गीतों में विराटत्व है, जो अपनी सहजता से स्पष्ट रूप से व्यंजित होता है ।

वे प्रेम और सौन्दर्य के प्रति सम्मोहित तथा मुख्यत: दर्द के नायक है। यह दर्द कहीं निजी क्षेत्र की अनुभूतियों पर आधारित है, तो कहीं उसे व्यापक सामाजिक आधार मिला है। सामाजिक तथा राजनीतिक

विसंगतियों की चर्चा करते हुए उन्होंने स्वस्थ मूल्यों को महत्व दिया है और समाज तथा युग को परिष्कृत करने के लिए अपनी अमर आस्था समर्पित की है; इसलिए जहाँ अँधेरे की पर्तो को खोलने के समर्थ प्रयत्न प्रतिबिम्बित हुए है, दूसरी ओर आस्था के विराट संदर्भ पूरी शक्तिमता से उभरकर मनुष्य को शक्ति और सामर्थ्य से सम्पन्न करते है।

वस्तुत: विराट के गीतों का क्षेत्रफलक विराट है और उपर्युक्त तमाम स्तरों का तालमेल उनके गीतों को समर्थता प्रदान करता हुआ उन्हें युग धर्म का ईमानदार से निर्वाह करने वाला साहित्यकार सिद्ध करता है।

सौन्दर्य निरूपण : विराट के गीतों में सौन्दर्य निरूपण की प्रवृति प्रारंभ से ही गतिशील रही है। सौन्दर्य चाहे चेतन का हो या जड का,कवि उसके चित्रण में रमा रहता है। वह सौन्दर्य का मुग्ध चितेरा है। यह सौन्दर्य आन्दोलित कवि मन की प्रेरणा बनकर जीवंत हुआ है। सौन्दर्य का रूपाकंन करते समय उसके मन में पूत भावनाएँ ही जन्म लेती है। इन्ही भावनाओं को कल्पना की भव्यता के साथ जोडता हुआ कवि कह उठता है।

केश कंधों पडे अधखुले, मेघ ज्यों साँवले– साँवले
सांस छूकर तुम्हारी लगा, आ गये गंध के काफिले।

(निर्वसना चांदनी २९–३०)

वह रूप की आँखों से आँखें मिलाकर किसी तरल रश्मि की तरह सौन्दर्य का पान करता हुआ और उसे व्यापकत्व प्रदान करता हुआ कहता है–

रूप ये, रंग ये, नियति के दृश्य सब
आप के ही विशद वेश विन्यास है।
आप ही संदली वन्य बतास है।
मधुरिमा है, मधुर मुग्ध मधुमास है
आप ही कल्पना,आप ही सत्य है,
एक संकल्प है, एक विश्वास है।

(आस्था के अमलतास–१५)

इसी संकल्प और विश्वास के सहारे कवि प्रेम के आदर्श स्वरूप को महत्व देता है। सौन्दर्य के इसी तरह का भव्य चित्रांकन रूप जल से घुली हुई आँख, मैने दर्शन पा लिया, रोशनी ले लूँ, जूडे में पीला गुलाब, देह का रंग, बिस्तर पे चांदनी, मेघ फिर छाने लगे, आदि गीतों में समर्थता से हुआ है।

इसी क्रम में कवि ने प्रकृति के अनेकानेक रमणीय चित्रों का अंकन किया हैं। वस्तुत: विराट के काव्य में नारी सौन्दर्य और प्रकृति सौन्दर्य का निरूपण एक दूसरे के समानान्तर नहीं, समाश्रित होकर प्रस्फुटित हुआ है। प्रकृति सौन्दर्य का निरूपण विविध रूपात्मक है। कहीं वह शुद्ध चित्रण या आलंबन रूप में है, कहीं आलंकारिक रूप में प्रकृति का उपयोग हुआ है तो कहीं जीवन के अन्यान्य सन्दर्भो की प्रतीक बनकर प्रकृति रूपायित हुई है। कहीं प्रकृति के कमनीय रूप का तो कहीं उसके भीषण रूप का चित्रण मिलता है।

जहाँ एक ओर प्रकृति सौन्दर्य का निरूपण परम्परागत रूप में हुआ है यथा पूनम की रात का चित्रण दृष्टिगत है–

चाँद हंस जैसा लगता है, तारों के मोती चुगता है,
नभ हैं जैसे मानसरोवर, भरा हुआ चंदा का पानी।

(स्वर के सोपान–१०२)

तो दूसरी ओर प्रकृति के रौद्र रूप का भी वर्णन किया गया है–

सूरज ने क्रोध किया/धूप तिलमिलाई।
दूर्वा का मुख उतरा/ धरा तिलमिलाई।

(किरण के कशीदे– १५)

'ओ मेरे अनाम में' संग्रहीत प्रणय निमुग्धा चांदनी एवं सांझ के चित्र कवि के दुख–सुख के भागी बनकर व्यंजित हुए हैं। दोपहर, श्शाम, सुबह, चांदनी, बादल के अनेकानेक चित्र विराट के काव्य में उपलब्ध होते है। 'प्यारा मृग सोने का' में सूर्यास्त के अनूठे बिम्ब को प्रस्तुत किया गया हैं। पीले चावल द्वार पर संग्रह में संध्या का अनुपम चित्र इस प्रकार अंकित हुआ हैं–

सिमट गये किरणों के कोश, शाम जामुनी हुई।

(पीले चावल द्वार पर–२१)

इस प्रकार नारी सौन्दर्य का निरूपण हो या प्रकृति सौन्दर्य का चित्रण कवि ने उस सौन्दर्य के प्रति अपनी सहज आसक्ति प्रकट की हैं और यह भव्य आसक्ति भव्य कल्पनाओं को समग्रता एवं जीवन्तता से प्रस्तुत करती हुई काव्य को मुखरता और रागमयता प्रदान करती हैं।

प्रेम निरूपण : प्रेम का स्वरूप अनिर्वचनीय है। इसका व्यक्त रूप कवि विराट की सामर्थ्य का परिचायक है। कवि का प्रेम चित्रण उदात्त हैं। कही भी वह भौतिक विचलन से त्रस्त नहीं हैं, हृदय से जुडे

होने के कारण ही प्रेम में पवित्रता और गहराई है। उनकी प्रेम सम्बन्धी भावनाएँ पवित्र विचारों से युक्त हैं। प्रेम को वह जीवन का प्राणतत्व मानता हैं और इसलिए उसने उसे निरन्तर विस्तार देने का समर्थ प्रयत्न किया हैं। प्रेम निरूपण में उन्होंनें मिलन और विरह दोनों स्थितियों के चित्र उकेरे है। उनके काव्य में हर स्थिति जीवन्तता के साथ अभिव्यक्त हुई है। प्रेम का रूवरूप निरूपण करता हुआ लिखता है कि–

न गाते थकेंगें, कभी कंठ अपने।
नहीं अन्त होगा प्रणय की कथा का।।
सृजन शक्ति है प्यार परमात्मा की।
वही है महाकाव्य मनु की व्यथा का।।

(भीतर की नागफनी–१२)

यद्यपि स्वर के सोपान में प्रेम निरूपण में कवि की दृष्टि परम्परागत छायावादी भावुकता से ओतप्रोत रही है, परन्तु बाद के संकलनों में नवीन भाव बोध को नवीन अभिव्यक्ति शैली का रूपाकार मिला हैं। प्रारम्भ के गीत नई उमर के गीत जैसे है, जबकि बाद के गीत दृष्टि विकसित होने के सोपान सिद्ध होते है। इसलिए हर स्थिति में प्रिया के भली लगने पर कवि अपनी पवित्र भावनाओं को आकार देता हुआ कहता हैं–

जन्म जन्म को ब्याह चुके हैं अपने मन
तन से हम भांवर न फिरे तो भी क्या है।

(ओ मेरे अनाम–४५)

परमात्मा की इस शक्ति को कवि पूर्ण पवित्रता और मर्यादा के परिवेश में प्रस्तुत करता है। वह प्रणय पथ पर डूबकर सागर पार करने की उपलब्धि सहेजता हुआ कहता है।

मन से जिसको भी प्यार किया, मन के भीतर उसको पूजा,
होठों से कह देने वाली, प्रेमी की जात नही होती।

(निर्वसना चांदनी २६)

प्रिय से वियुक्त स्थिति का चित्रण करते हुए उसे लगता है कि –

एक तुम ही नही, तो हमारा शहर
अब पराया शहर है हमारे लिये,

आंसुओं से चुकाते चले जा रहे
जिन्दगी एक कर है हमारे लिए।

(आस्था के अमलतास-३८)

प्रेम में स्मृति के सन्दर्भो की अभिव्यंजना करते हुए कहता है-

उजड चुका है श्शहर सपने का
वैभव का न पवन बहता है
बस फकीर है एक याद का
इसके खण्डहर में रहता है।

(दर्द कैसे चुप रहे-१४)

निष्कर्षत: विराट के काव्य का यह पक्ष निजी अनुभूतियों पर आधारित है, अत: उसमें वैयक्तिकता प्रबल है। प्रेम और तद्जनित वेदना उसके मौन को मुखरित करती है और वह समग्रता के साथ इसके निरूपण में अपनी तल्लीनता प्रकट करता है।

युगीन स्थितियां और आधुनिकता के सन्दर्भ : श्री विराट के काव्य की प्रथम प्रवृति प्रेम, सौन्दर्य एवं व्यक्तिगत दर्द के उपाख्यान से सम्बन्धित है। यह प्रवृति जितनी शक्तिमता के साथ उभारी है, उतनी ही श्शक्तिमता के साथ युगीन स्थितियां और आधुनिकता के सन्दर्भो को सहेजती प्रवृति भी उभरी है। विषय क्षेत्र को वैविध्य देते हुए कवि कहता भी है-

एक तुम्हारा रूप नहीं है केवल कथ्य प्रिय।
और विषय भी इस जीवन के गाने लायक है।

(पीले चावल द्वार पर-७१)

इस क्रम में कवि ने आधुनिकता के विविध आयामों को उद्घाटित कर युगीन स्थितियों की चर्चा करते हुए मानवीयता के दर्द को उकेरा है। प्रेम एवं सौन्दर्य के क्षेत्र में उनका दर्द सीमित था, किन्तु यहाँ सामाजिकता के विराट संदर्भो को व्यापक फलक पर प्रस्तुत करता है। स्वयं कवि ने भी कहा है-

जो दर्द हे चिरचन,बांधा है गीत में
सबकी व्यथा है,केवल मेरी व्यथा नहीं।

(आस्था के अमलतास-८०)

अत: निज की पीडा को युग की पीडा से जोडकर कवि का चिन्तन क्षेत्र विस्तृत हुआ है, जो दक्ष प्रतिभा, युग धर्म के प्रति उसके सम्यक निर्वाह और साहित्यकार की जागरूकता को प्रकट करता है। इस प्रकार अन्तर में समाया दर्द व्यष्टि से समष्टि की ओर गतिशील होकर स्वर की सीमा को विस्तार देते हुए कवि के चिन्तन के आयामों को प्रसार देता हुआ व्यापक मानवीय प्रवृति का सफल प्रस्तुतिकरण सिद्ध होता है।

युग पीडा से साक्षात्कार की स्थिति में कवि को स्पष्ट लगता है कि यांत्रिकता मनुष्य पर हावी हो गई है। शोषण के चक्र ने मनुष्य की अस्मिता को तहस-नहस कर डाला है। ऐसी स्थिति में-

सृजन उदास बुझा सा बैठा, कला प्राचीरों की दासी है,
मांस पिण्ड भर हृदय रह गया, सच्चा अन्तकरण नहीं है।

(स्वर के सोपान-२०)

सच्चे अन्तकरण के अभाव में ही जलते दीप को सभी स्वीकार करते है, जबकि बुझते दीपक को कोई सहारा नहीं देता। जिन्दगी में कोई किसी का नहीं हैं। जिन्दगी अंधा कुआ बन गई है, इसी स्वरूप पर चिन्तन करते हुए कवि कहता है कि-

जिन्दगी की सुरंगें घुमावों भरी,
कोलतारी अंधेरा यहाँ से वहाँ,
आदमी के दुखों के समाधान को,
खोजते आ गये हम कहाँ से कहाँ।

विपरीत परिस्थितियों और अनिश्चितता के वातावरण में मानव की छटपटाहट बढती ही चली आ जाती है। यांत्रिक युग का अति बौद्धिकता से ग्रस्त आधुनिक बोध उसे उद्वेलित कर देता है। अहं अपनी परिस्थितियों से असन्तुष्ट होकर कह उठता है-

आदमी से आदमी के बीच में
एक जो ऐसी बर्फ जो पिघली नहीं
शेष आदिम गंध वह इतिहास में
यह सदी बदली, मगर बदली नहीं।

(बूँद-बूँद पारा-१३)

ऐसी स्थिति में आधुनिक सभ्यता ने मानव को खूँखार भेडिया बना दिया है। वह इस सच्चाई को बयान करता हुआ कहता है–

सभ्यता के पथ पर यह आदमी की यात्रा,

देवताओं से शुरू की, वहशियों तक आ गये।

(आस्था के अमलतास–३५)

यही कारण है कि आज मनुष्य तृष्णाओं के मृगजल की तलाश में भटक रहा है। वह अपने संदर्भो से भटककर यंत्रवत् खोखला होता जा रहा है। भय, संकट, संशय, अविनय और अज्ञान मनुष्य के चतुर्दिक अपना जाल कसे हुए सन्नद है। विभाजित व्यक्तित्व ने अस्तित्व के संकट को और भी गहरा दिया है। महानगरीय सभ्यता इस टूटन को और भी बढा रही है। कवि कहता भी है–

सिर दतर में, पांव भीड में, धड कहवाघर में,

महानगर ने खण्ड–खण्ड में बांट दिया मुझको ।

(भीतर की नागफनी–३५)

वस्तुत: बौद्धिकता की अतिशयता और यांत्रिक सभ्यता ने देवता की प्रतिमा से निकलते स्वरों को अवरूद्ध कर दिया है, इसलिए आधुनिक जीवन संदर्भो में –

एक सन्नाटा शहर पर जम गया,

जो जहाँ पर जिस जगह पे था, थम गया।

कांपता सा रह गया पिघला तिमिर,

शून्यता का बोध मन में रम गया।।

(निर्वसना चांदनी –११)

संत्रस्त करने वाले सामाजिक संदर्भो की ही तरह ही राजनैतिक स्थितियाँ भी है। कवि राष्ट्रीयता के मानद मूल्यों को जब तहस–नहस होते देखता है, तो उसे अपने भीतर विद्रोह जन्म लेता नजर आता है। राजनैतिक क्षेत्र में फैली युगीन विसंगतियों को व्यंग्यात्मक रूप में स्पष्ट करते हुआ कहता है कि–

आप अनुमति दें अगर तो इस देश की चर्चा करें,

जो हमें उपलब्ध, उस परिवेश की चर्चा करें,

मुठिठयों में भीख अपनी और तन पर चीथडे,

लूट में जो रह गया, उसश्शेष की चर्चा करें।

(बूँद-बूँद पारा-१३)

कवि मानता है कि कुर्सी की होड में राजनीति भ्रष्ट हो गई हैं। अवसरवादिता, स्वार्थपरता, भ्रष्टाचार,आदि के प्रसार ने राष्ट्रीयता की उदात्त भावना और देश के उज्जवल भविष्य को तहस-नहस कर दिया हैं। कवि राष्ट्रीयता के उदात्त भावों का पक्षधर हैं। उसके हृदय में देश की सांस्कृतिक गरिमा के नव्य और भव्य रूप की एक निर्माणपरक कल्पना हैं। किन्तु रक्षकों के भक्षक हो जाने के कारण यह साकार नहीं हो पाती। इसलिए कवि ने भूखे देश की लोरी, आवाज न दो, क्या जवाब दोगे, कौन ले, कौन करे, जनयुग की गंगा, कुछ न कहो, कौन कहे आदि रचनाओं में राजनीतिक नेताओं की असंगत प्रवृतियों तथा मूल्यहीनता की स्थितियों पर समस्त व्यंग्यात्मक प्रहार किये है।

राजनेताओं की तरह कवि उन साहित्यकारों को भी फटकारता है, जो फैशन या सुविधा के लिए अपनी अनमोल साधना चंद टुकडों में बेच चुके है। वह मानता है कि आरोपित दर्द और नकली संवेदना का प्रकटीकरण युग धर्म को निभाने के लिए सही रास्ता नहीं हैं। इसी क्रम में गीतों में व्यक्त आत्मकथ्य दूसरों के लिए मार्गदर्शक सा है। वे रचना प्रक्रिया की वास्तविक स्थिति को प्रकट करते हुए कहते हैं कि-

हम निचोडते हैं आत्मा का लहू

तब कहीं जा के गजल होती है।

(आस्था के अमलतास-३५)

कवि की ये पंक्तियाँ हवाई लेखन में लगे रचनाकारों के प्रति अप्रत्यक्ष व्यंग्य भी हैं। इस प्रकार विराट ने राजनीतिक, सामाजिक, साहित्यिक आदि समस्त क्षेत्रों में बिखरी मनुष्य की अन्तरात्मा को ध्वस्त करने वाली आधुनिक स्थितियों को बडे दर्द के साथ प्रस्तुत किया है। यह दर्द कहीं पीडा बनकर अभिव्यक्त हुआ है तो कहीं मूल्यों को निर्मित करने वाली छटपटाहट में बदलकर आक्रोश के रूप में बिखर पडा हैं।

आस्था के संदर्भ : वस्तुत: कवि का दृष्टिकोण इन तमाम विसंगत स्थितियों के प्रति विद्रोही रूप धारण किये हुए है। उसका धर्म उसे तम से सामना करने को प्रेरित करता है और इसलिए उसका अहं इन शब्दों में प्रस्फुटित होता है-

बीच नदी में डूब गये हम–तट पर ऐसा कहे न कोई,

हमें धार के पार उतरना इसलिए हो गया जरूरी।

(बूँद–बूँद पारा–१७)

सन्नाटे को तोडने के उपक्रम में, उपलब्ध परिवेश को परिवर्तित करने की सार्थक कोशिश करते हुए मनुष्यता की तलाश में निकलते हुए वह सबको आश्वस्त कररता है।–

रहो निश्चिन्त जब तक मैं खडा हूँ तिमिर के तट पर,

कहीं भी रोशनी को खुदकुशी करने नहीं दूँगा।

(किरण के कशीदे– ३५)

वस्तुत: युग के अभाव को भरने की साध उसकी चेतना को संघर्षजीवी बना देती है। इसलिए वह नई सुबह के सूरज का ध्यान करता हुआ मझधार स्वीकारने तथा तुफानों से लडने का साहस बांटता फिरता है–

शतरंज बिछाये हैं दुनिया, छल बल से मुहरें चलती हैं।

श्शह लाख लगाती है दुनिया, पर मन की मात नहीं होती।

(निर्वसना चांदनी –२६)

वह जीवन के युद्ध में हर असंगति को चुनौती देता हुआ सबको आश्वस्त करता है–

आखिर यह भी धुंध छटेगी,धुआं उडेगा धूल हटेगी।

कुछ दिन धीरज रखो, होगा निर्मल वातावरण हमारा।।

(बूँद–बूँद पारा–६०)

वस्तुत: कवि की जीवन मूल्यों के प्रति अदम्य एवं अटूट आस्था है। इसी आस्था के सहारे वह बूंद–बूंद पारे को समेटेने की चेष्टा करता है। श्रद्धा को विश्वास से, कीर्ति को आचरण से, गृहस्थ को सन्यास से, अश्रु को हास से जोडने वाला उसका उपक्रम इसी चिन्तन का परिणाम हैं। वक्त के बदलने और कुहरे से सूर्य के निकलने की स्थिति पर उसे अमिट विश्वास हैं और इसलिए जीवन के चक्रव्यूह को भेदने का उपक्रम करते हुए गायक से तारों को कसने का आग्रह करता हैं। अपने इसी विश्वास के सहारे उसने अपने स्वाभिमानी व्यक्तित्व को जिलाये रखा, आँधियों में लौ स्थिर किये रहा, अभावों के धुएँ में

भी प्रयत्नों के दम को घुटने नहीं दिया और हर कटु यथार्थ सें साक्षात्कार कर मानव के भविष्य के प्रति आश्वस्त बना रहा। आस्था के ये संदर्भ विराट के गीतों की ऊर्जा के स्रोत हैं और कवि की उपलब्धि के वस्तुत: विराट आयामों को प्रस्तुत करते हैं।

विराट का काव्य शिल्प : विराट के गीतों में विषय वैविध्य जिस प्रकार उनकी काव्य कला के विविध आयामों का साक्षात्कार कराते हैं, शिल्प विधान की दृष्टि से भी उनकी व्यंजना उतनी ही उदात्त कोटि की हैं। विषय का चयन ओर उसका निर्वाह दोनों ही पक्ष विराट को श्रेष्ठ कवि सिद्ध करते हैं। उन्होने निरन्तर अपने गीतों का परिष्कार किया और इसी क्रम में गीतों का शिल्प विधान भी निरन्तर निखरता गया है। गेयता इन गीतों की प्राणधारा हैं। विराट का लगभग प्रत्येक गीत लयात्मकता का सम्यक निर्वाह करता हुआ दूसरों को गुनगुनाने के लिए बाध्य करता हैं। भाव के अनुरूप भाषा का रूप है इसलिए वह सपाट न होकर लाक्षणिकता से युक्त हो गई है। कवि की लाक्षणिक अभिव्यक्ति के अन्तर्गत नये बिम्बों की रचना, नवीनतम प्रतीकों की सफल प्रस्तुति और मिथ के विविध स्तरीय अनेक सार्थक प्रयोग उनकी समर्थ काव्य व्यंजना शक्ति के द्योतक है। इन सब के बिना आधुनिकता को व्यक्त करना संभव ही नहीं था। छंद विधान के अन्तर्गत भी कवि ने अनेक नये तथा निर्दोष प्रयोग किये हैं, जो वस्तुत: नयेपन का एहसास कराते हैं। श्री रामावतार त्यागी के शब्दों में विराट को छन्द का पूर्ण ज्ञान है और कविता के रंग का पता है। यद्यपि कही कही अटपटे भाषा प्रयोग, शब्द चयन की प्रयासपूर्ण पद्धति चिन्तनीय है। तथापि वह इतनी स्वल्प मात्रा में हैं कि उसके कारण मूल्यांकन में कोई विशेष बाधा उपस्थित नहीं होती।

४.३ समग्र मूल्याकंन :

वस्तुत: विराट का काव्यत्व उनके कवि व्यक्तित्व के प्रौढ स्वरूप को प्रदर्शित करता हुआ विकास के नये आयामों को प्रोद्भासित करता है। उन्होने एक ओर परम्परा को सम्मान दिया है तो दूसरी ओर आधुनिक जीवन की जटिल संवेदनाओं को सहजता से प्रस्तुत कर नव्य चेतना को अनुकूल समर्थ अभिव्यक्ति प्रदान की है। उनके गीत अनुभूत जीवन की अभिव्यक्ति के गीत है और मन की सहज प्रक्रिया से जन्मे है। अत: उनमें गीतिकाव्य की समस्त विशेषताएँ नवीन भाव बोध और नवीन अभिव्यक्ति शैली के परिप्रेक्ष्य में उपलब्ध होती है। अस्तु, रस सिद्ध, सुप्रतिष्ठित, बहुचर्चित,दर्द के गायक और एक सामर्थ्यवान आस्थावान कवि के रूप में भी विराट आधुनिक हिन्दी गीति परम्परा में अपना महत्तवपूर्ण स्थान रखते है। इसलिए श्री दिनेश सौनवलकर का यह कथन सत्य प्रतीत होता है कि ऐसे गीतकार का सृजन निश्चय ही पिछले दशक की महत्वपूर्ण उपलब्धि है।

रूप है, प्यार है, दर्द है इसलिए

काव्य में श्शेष रसधार है आज भी।

विराट की नई कविता – पुस्तक आस्था के अमलतास से ली गई ये पंक्तियाँ विराट की काव्य सामग्री का खुलासा करती लगती है। रूप, प्यार और दर्द और इनसे उत्पन्न वह रस जो काव्य को काव्य बनाये हुए है।

जाहिर है कि वर्तमान के काव्य संसार में कार्य कर रहे किसी कवि के पास इन तत्वों का होना उसके पिछडेपन और वर्तमान परिवेश से कटाव का संकेत है। रूप, प्यार, दर्द और रस को वर्तमान विचारक पुराने जमाने की बाँतें मानता है। लेकिन यह सच नहीं है क्योंकि रूप, प्यार, दर्द और रस के बिना आज भी जीवन निस्सार है। फिर इन तत्वों से निर्मित विराट की कविता वर्तमान से कटी हुई कैसे हो सकती है? निसन्देह विराट की कविता आज के आम आदमी की जिन्दगी की कविता है। विराट की कविता बिना किसी बनाव श्रृगाार के सादी जिन्दगी से उपज कर सीधे जिन्दगी में उतरती है। गीत हो या गजल विराट ने बिना किसी नक्काशी के समकालीन जिन्दगी के कहें और मुलायम चेहरे को अपनी रचनाओं में जिस विविधता के साथ अंकित किया है, वह किसी भी सहृदय के लिए सहज सुलभ है।

एक समय था जब गीत अपने दिक्कत काल में था और रूमानी संभावनाओं तथा संवेदनाओं में फँसा था तब जिन गीतकारों ने गीत की गिरती प्रतिष्ठा को सहारा दिया, उनमें विराट भी एक थे। उन्होने गीतों को नया श्शब्द, संबोधन एवं भाषा देकर गीतों के स्वर को बदला, जिससे बदली हुई मानसिकता में गीतों की सामाजिक भूमि वैचारिक बन गई और विराट गीतों के नये सामाजिक परिवेश में नयी पोशाकों के साथ महत्वपूर्ण रचना चरित्र और व्यक्तित्व के साथ उपस्थित हुए। विराट गीत की मूल आत्मा से अलग नहीं हो सके। आयातित संस्कृति को हवा देने वाले लोगों के प्रति विराट की वैचारिक सोच के ठोस उदाहरण –

मांगी हुई तूलिका के

फैशनग्रस्त चितेरे हम

चौंकाने वाले उलझी आकृतियों के

भीतर की नागफनी, पृष्ठ–२१

गीतकार विराट की सबसे बडी विशेषता यह है कि वह समझौतावादी नहीं है। जुझारू प्रवृति उसके

रोम-रोम में समायी हुई है। इसलिए वह पूंजी दु:ख के विरूद्ध तेज आवाज भी लगाता है और छोटे तबके के लोगों के समाज में बैठ कर उनकी कथा-व्यथा भी सुनता है-

एक तो यह बिवाई फटी सो धरा

दूसरे गुप्त गोदाम ताले पडे

एक कृत्रिम कभी थोपदी शीश पर

लोग घर से निकल पंक्तियों में खडे।

यह कहना गलत है कि विराट केवल रूमानी संभावनाओं के कवि हैं। इधर पिछले एक दशक से विराट के गीतों का सवर बदला हैं। उनके दिल में छोटे तबके के लोगों के प्रति गहन आस्था और सहानुभूति है। विराट के गले में आम आदमी का दर्द हैं। उनके दर्द को विराट ने धुनों-स्वर- तानों के साथ गीत में उतारा है। फलत: उनके गीतों में सहजता और स्वाभाविकता है।

विराट वक्त के साथ चलने का आदी नही है, बल्कि वक्त उनके बताए रास्ते पर चलता है। विराट के गीतों में सहजता और संप्रेषणता की व्यापकता हैं। इनका शिल्प साफ-सुथरा और तराशा हुआ है, इसलिए उनमें सहज आर्कषण है। उनके गीत मोहभंग की स्थिति पैदा करते है। गीतों के गगन में चन्द्रसेन विराट ध्रुव तारे की तरह हैं, जिससे हर नया रचनाकार वक्त की सही दिशा और दशा पहचानता है। वे गीतों को मनुष्य की देह में बहुत संवेदनिक अहसास के साथ पहुँचाते हैं और उनके भीतर की सच्चाई को उकेर कर बाहर लाते हैं। इसलिए विराट के गीतों की आतंरिक दुनिया और बाह्य संसार के बीच आत्मिक सह-सम्बन्ध है। विराट के गीतों का रचनात्मक चरित्र भारी भरकम और प्रभावी है। ये जी हजूरी की भाषा में रंगे और ढले नहीं है, बल्कि इनमें खुरदुरापन और धारदार यथार्थ हैं जो गद्दार भाषा और व्यवस्था की पीठ पर छुरा भोंकता है और मानवीय मूल्यों की कद्र करते हुए उसका पुर्नमूल्याकंन कराता है। ये दूसरों की लीक से अलग पहचान लिये है। उनके गीतों और छन्दों द्वारा भीड़ से अलग सरलता से पहचाना जा सकता है। विराट का रचनात्मक चेहरा कौनसा है?

❑❑❑

• अध्याय - ५ •

श्री चन्द्रसेन विराट के गीतों का कला पक्षः विवेचन

५.१ विराट का काव्य-समीक्षात्मक विवेचन :

प्रकृति से एक आदिम लगाव अनुभव कराने वाले उनके गीतों में आधुनिक समय का तनाव परिलक्षित होता है। प्रतिक्रियाओं के तीखे संवेदनात्मक एहसास के साथ जो सादृश्य बिम्ब सामने आता है, वह व्यंग्य को तीखा और सघन बनाता हैं। यथार्थ की तीखी समझ और चेतना का होना जरूरी हैं। वे अपनी सामाजिकता प्रकृति में और मानवीय सम्बन्धों में खोजना चाहते है, वहाँ उन पर यह दायित्व भी है कि अपनी भाषा को व्यापक सम्प्रेषणीयता का जनतांत्रिक आधार देते हुए उसे जरूरी रूपतामक संगठन दे सके । जीवन नैरन्तर्य के समर्थक है। वे सक्रिय सचेष्ट जीवन के गीत गाते है। सहजता, अर्थमय सरलता से युक्त वे कठिन परिस्थितियों में जन्म लेती कविता के मर्म से परिचित है। गीत कला के साथ-साथ सामाजिक विमर्श भी है।

रूप है, प्यार है, दर्द है इसलिए

काव्य में शेष रसधार है आज भी।

विराट के गजल संग्रह आस्था के अमलतास से ली गई ये पंक्तियाँ विराट की काव्य सामग्री का खुलासा करती लगती है। रूप, प्यार और दर्द और इनसे उत्पन्न वह रस जो काव्य को काव्य बनाये हुए है। जाहिर है कि वर्तमान के काव्य संसार में कार्य कर रहे किसी कवि के पास इन तत्वों का होना उसके पिछडेपन और वर्तमान परिवेश से कटाव का संकेत है। रूप, प्यार, दर्द और रस को वर्तमान विचारक पुराने जमाने की बाँतें मानता है। लेकिन यह सच नहीं है क्योंकि रूप, प्यार, दर्द और रस के बिना आज भी जीवन निस्सार है। फिर इन तत्वों से निर्मित विराट की कविता वर्तमान से कटी हुई कैसे हो सकती है? निसन्देह विराट की कविता आज के आम आदमी की जिन्दगी की कविता है। विराट की कविता बिना किसी बनाव श्रृगाार के सादी जिन्दगी से उपज कर सीधे जिन्दगी में उतरती है। गीत हो या गजल विराट ने बिना किसी नक्काशी के समकालीन जिन्दगी के कहें और मुलायम चेहरे को अपनी रचनाओं में जिस विविधता के साथ अंकित किया है, वह किसी भी सहृदय के लिए सहज सुलभ है।

किसी भी साहित्यकार की विस्तृत काव्य साधना और उनके योगदान पर जब भी विचार किया जाता है तो उनके कृतित्व के कलापक्ष का उचित विवेचन और विश्लेषण किया जाना आवश्यक हैं। उनका स्पष्ट विचार है कि ''जीवन की आपाधापी में जीवन कहीं खो गया, ज्ञान की तलाश में मन गायब होता गया अथवा अधिक कहने के मोह में हम कथ्यहीन होते चले गये। ऐसी स्थिति से उन्हें कोई खतरा नहीं है। जो जिन्दगी को एक परम्परागत शैली के साथ जीते हैं, खतरा उनके लिए हैं जो शब्दों और विचारों के संसार में अपनी पहचान बनाना चाहते हैं। इस दृष्टि से देखता हूँ तो आज की अधिकांश कविताओं से मुझे निराशा होती है। विचार करने पर ये स्थिति सिर्फ दयनीय ही प्रतीत होती है। रचनाकार अपनी मूल प्रकृति में दैन्य के प्रति विद्रोही होता है, उसके विद्रोह अथवा उसके क्षोभ को अनन्तोगत्वा केवल उसकी रचनाएँ ही संभालती हैं। यह प्रक्रिया जितनी गहन होती है, उतनी ही सहज बनती है कविता।''

(लडाई लम्बी है की भूमिका से)

एक समय था जब गीत अपने दिक्कत काल में था और रूमानी संभावनाओं तथा संवेदनाओं में फँसा था तब जिन गीतकारों ने गीत की गिरती प्रतिष्ठा को सहारा दिया, उनमें विराट भी एक थे। उन्होने गीतों को नया शब्द, संबोधन एवं भाषा देकर गीतों के स्वर को बदला, जिससे बदली हुई मानसिकता में गीतों की सामाजिक भूमि वैचारिक बन गई और विराट गीतों के नये सामाजिक परिवेश में नयी पोशाकों के साथ महत्वपूर्ण रचना चरित्र और व्यक्तित्व के साथ उपस्थित हुए। विराट गीत की मूल आत्मा से अलग नहीं हो सके। आयातित संस्कृति को हवा देने वाले लोगों के प्रति विराट की वैचारिक सोच के ठोस उदाहरण–

मांगी हुई तूलिका के
फैशनग्रस्त चितेरे हम
चौंकाने वाले उलझी आकृतियों के

भीतर की नागफनी, पृष्ठ–२१

गीतकार विराट की सबसे बडी विशेषता यह है कि वह समझौतावादी नहीं है। जुझारू प्रवृति उसके रोम–रोम में समायी हुई है। इसलिए वह पूंजी दु:ख के विरूद्ध तेज आवाज भी लगाता है और छोटे तबके के लोगों के समाज में बैठ कर उनकी कथा–व्यथा भी सुनता है–

एक तो यह बिवाई फटी सो धरा
दूसरे गुप्त गोदाम ताले पडे

एक कृत्रिम कभी थोपदी श्शीश पर

लोग घर से निकल पंक्तियों में खडे।

यह कहना गलत है कि श्री विराट केवल रूमानी संभावनाओं के कवि हैं। इधर पिछले एक दशक से विराट के गीतों का सवर बदला हैं। उनके दिल में छोटे तबके के लोगों के प्रति गहन आस्था और सहानुभूति है। विराट के गले में आम आदमी का दर्द हैं। उनके दर्द को श्री विराट ने धुनों–स्वर– तानों के साथ गीत में उतारा है। फलत: उनके गीतों में सहजता और स्वाभाविकता है।

श्री विराट वक्त के साथ चलने का आदी नही है, बल्कि वक्त उनके बताए रास्ते पर चलता है। विराट के गीतों में सहजता और संप्रेषणता की व्यापकता हैं। इनका शिल्प साफ–सुथरा और तराशा हुआ है, इसलिए उनमें सहज आर्कषण है। उनके गीत मोहभंग की स्थिति पैदा करते है। गीतों के गगन में श्री चन्द्रसेन विराट ध्रुव तारे की तरह हैं, जिससे हर नया रचनाकार वक्त की सही दिशा और दशा पहचानता है। वे गीतों को मनुष्य की देह में बहुत संवेदनिक अहसास के साथ पहुँचाते हैं और उनके भीतर की सच्चाई को उकेर कर बाहर लाते हैं। इसलिए श्री विराट के गीतों की आतंरिक दुनिया और बाह्म संसार के बीच आत्मिक सह–सम्बन्ध है। श्री विराट के गीतों का रचनात्मक चरित्र भारी भरकम और प्रभावी है। ये जी हजूरी की भाषा में रंगे और ढले नहीं है, बल्कि इनमें खुरदुरापन और धारदार यथार्थ हैं जो गद्दार भाषा और व्यवस्था की पीठ पर छुरा भोंकता है और मानवीय मूल्यों की कद्र करते हुए उसका पुर्नमूल्याकंन कराता है। ये दूसरों की लीक से अलग पहचान लिये है। गीतों और छन्दो से अलग पहचाना जा सकता है कि विराट का रचनात्मक चेहरा कौनसा है?

५.२ विराट का काव्य शिल्प :

विराट के गीतों में विषय वैविध्य जिस प्रकार उनकी काव्य कला के विविध आयामों का साक्षात्कार कराते हैं, शिल्प विधान की दृष्टि से भी उनकी व्यंजना उतनी ही उदात्त कोटि की हैं। विषय का चयन ओर उसका निर्वाह दोनों ही पक्ष विराट को श्रेष्ठ कवि सिद्ध करते हैं। उन्होने निरन्तर अपने गीतों का परिष्कार किया और इसी क्रम में गीतों का शिल्प विधान भी निरन्तर निखरता गया है। गेयता इन गीतों की प्राणधारा हैं। विराट का लगभग प्रत्येक गीत लयात्मकता का सम्यक निर्वाह करता हुआ दूसरों को गुनगुनाने के लिए बाध्य करता हैं। भाव के अनुरूप भाषा का रूप है इसलिए वह सपाट न होकर लाक्षणिकता से युक्त हो गई है। कवि की लाक्षणिक अभिव्यक्ति के अन्तर्गत नये बिम्बों की रचना, नवीनतम प्रतीकों की सफल प्रस्तुति, और मिथ के विविध स्तरीय अनेक सार्थक प्रयोग उनकी समर्थ काव्य

व्यंजना शक्ति के द्योतक है। इन सब के बिना आधुनिकता को व्यक्त करना संभव ही नहीं था। छंद विधान के अन्तर्गत भी कवि ने अनेक नये तथा निर्दोष प्रयोग किये हैं, जो वस्तुत: नयेपन का एहसास कराते हैं। श्री रामावतार त्यागी के शब्दों में '' विराट को छन्द का पूर्ण ज्ञान है और कविता के रंग का पता है। यद्यपि कही कही अटपटे भाषा प्रयोग, शब्द चयन की प्रयासपूर्ण पद्धति चिन्त्य है। तथापि वह इतनी स्वल्प मात्रा में हैं कि उसके कारण मूल्यांकन में कोई विशेष बाधा उपस्थित नहीं होती।

विराट जी के गीतों में समय के प्रति जो चिन्ता और चेतना है, उसके पीछे उनके सधे हुए शिल्प की महत्वपूर्ण भूमिका कही जा सकती है। गीतों की रचना मात्रिक शब्दों के अनुशासन में लिखना कठिन काम होता है, किन्तु विवेच्य गीतकार को भाषा, छन्द इतने सधे गये हैं, कि वह जो लिखते हैं, वह गणना की कसौटी पर खरे उतरते हैं।

गीत हो कि नवगीत या फिर मुक्तिका, गीतकार बहुत सावधानी से शब्दों का चयन करते हैं। यद्यपि यह बेहद कठिन कार्य हैं, किन्तु वह इसे सरलता से कर लेते हैं। गीत के प्रति उनकी यह आस्था हैं। उनका स्पष्ट और दृढ विचार है कि–**''छन्दबद्ध ही लिखा प्रारंभ से। आज भी उसी का निर्वाह कर रहा हूँ।''**

मानवीय सुख–दु:ख, मिलन, विरह, हर्ष, विषाद एवं अन्य अनुभूतियों को गीत पूरी सक्षमता के साथ अभिव्यंजित कर सकता है, गीत मानव के रागात्मक आवेगों को व्यक्त कर सकता है। उनका स्पष्ट विचार है कि गीत समय सापेक्ष तो है ही, कालातीत भी है क्योंकि उसमें मानवीय मन के समस्त रागात्मक संवेगों के अनुगाायन की गूँज हैं। औद्योगिकता और तकनीक के वातावरण में जीते हुए भी मनुष्य का आदिम मन आज भी रागात्मक है और इसलिए गीत उसके समस्त मनोभावों को सही संदर्भो में व्यक्त करने में सक्षम रहा है।

(लडाई लम्बी है की भूमिका से)

विराट जी के गीतों में शिल्प विधान का निर्वाह ईमानदारी और निष्ठा के साथ किया गया है। समय–समय पर समाज में आए परिवर्तनों का प्रभाव गीतकारों की भाषा और उनके भाव पक्ष पर पडता रहा है और यही प्रयोगधर्मिता यहाँ दिखाई देती है।

आधुनिक हिन्दी काव्य और विशेषकर गीत विधा में कथ्य और शिल्प को लेकर प्रयोग किये जाते रहे हैं। विराट जी ने काव्य परम्परा का निर्वाह करते हुए आधुनिकता का समन्वय करते हुए ही गीत लिखे हैं।

५.३ श्री विराट की रचनाओं का कलापक्ष–मूल्यांकन :

विराट ने जीवनगत वास्तविकताओं को उद्घाटित करने के लिए विविध बिम्बों का सृजनात्मक उपयोग किया है। इनके काव्य बिम्ब उनके कथ्य के अनुरूप नवीन अनुभूति प्रदान करते हैं। विराट की रचनात्मक क्षमता हिन्दी गजल में अद्वितीय है। उन्होंने कथ्य और शिल्प दोनों स्तरों पर न केवल प्रयोग किये हैं वरन् आने वाली पीढी के लिए भी मार्ग प्रशस्त किया। उनके गीत परम्परागत होते हुए भी नवीनता से ओतप्रोत है।

(क) मिथक प्रयोग : इनके प्रतीकात्मक तथा मिथकीय प्रयोगों का काव्य विधा में विशिष्ट महत्व है।

(ख) प्रतीक प्रयोग : इन्होंने परम्परागत प्रतीकों के अतिरिक्त नवीन प्रतीकों का प्रयोग भी किया है। रचना में अमूर्त रहस्यों एवं अव्यक्त जटिल भावों को मूर्त एवं सुपरिचित वस्तुओं के माध्यम से प्रस्तुत किये जाने की संज्ञा प्रतीक विधान है। डॉ. भगीरथ मिश्र के अनुसार – **''अपने रूप, गुण, कार्य या विशेषताओं के सादृश्य एवं प्रत्यक्ष के कारण जब कोई वस्तु या कार्य किसी अप्रस्तुत वस्तु, भाव, विचार, क्रियाकलाप, देश, जाति, संस्कृति आदि का प्रतिनिधित्व करता हुआ प्रकट किया जाता है, तब वह प्रतीक कहलाता है।''** वास्तव में रचनाकार प्रतीकों का प्रयोग भावों–विचारों के उत्तेजन और अभीष्ट अर्थ के सम्यक द्योतन के लिए करते है। श्री विराट ने भी वर्ण्य विषय की गहनता और मार्मिकता के लिए प्रतीकों का प्रयोग किया हैं उन्होंनें प्रतीकों का चयन याहित्य, इतिहास, पुरण, संस्कृति, प्रकृति, विज्ञान आदि अनेक स्रोंतो से किया हैं।

(ग) बिम्ब विधान : किसी भी रचना में शब्दों के माध्यम से अमूर्त को मूर्त करना और अप्रस्तुत को प्रभावपूर्ण ढंग सं प्रस्तुत कर देना बिम्ब विधान कहलाता हैं। यह प्रस्तुतिकरण तीन स्तरों पर होता है– दृश्य स्तर पर, मानस स्तर पर, संवेदनागत धरातल पर। इस कारण बिम्ब विधान भी तीन प्रकार का होता है– चाक्षुष बिम्ब या दृश्य बिम्ब, मानस बिम्ब एवं संवेद्यबिम्ब समीक्ष्यकाव्य में तीनों प्रकार के बिम्बों की सफल योजना मिलती है। चाक्षुष या दृश्य बिम्ब के अर्न्तगत रचनाकार श्शब्द चित्र उपस्थित करता है। वह श्शब्दों को चुन–चुनकर इस प्रकार संयोजित करता है कि पाठक या श्रोता के मानस पटल पर वर्ण्य विषय का समग्र चित्र अंकित हो जाता है। जिस प्रकार कलाकार रंगों और रेखाओं से दृश्य को उभार कर इतना प्रभावोत्पादक बना देता है कि दृष्टा सब कुछ विस्मृत कर दृश्य में खो जाता है उसी प्रकार रचनाकार दृश्य– बिम्ब की सफलता होती है। दृश्य– बिम्ब दो प्रकार के होते है– स्थिर बिम्ब एवं गतिशील बिम्ब।

समीक्ष्यकाव्य में दोनों प्रकार के बिम्ब मिलतें है। स्थिर बिम्बों में कवि ने पूर्ण परिदृश्य एक साथ साकार कर दिया है।

दृश्य-बिम्ब से अधिक उन्हें मानस बिम्बों के अंकन में सफलता मिली है। मानस बिम्ब दो प्रकार के होते हैं- भाव प्रधान और विचार प्रधान। समीक्ष्य काव्य में जहाँ कवि का मन प्रणयभावों की मधुर रागिनी से निनादित है अथवा प्रकृति के मनोरम सौन्दर्य से समन्वित है अथवा जनसामान्य की करूणा जनित दुर्दशा पर उद्वेलित है। वहाँ भाव प्रधान बिम्बों की सृष्टि हुई है, तथा जहाँ कवि ने समसामयिक समस्याओं के युक्तियुक्त व्यवहारिक समाधान सुझाये हैं वहाँ विचार प्रधान मानस बिम्ब सफलतापूर्वक उभरे हैं। देशभक्ति के भावावेग में श्री विराट ने प्रभावपूर्ण भावप्रधान मानस बिम्ब रचे है।

एजरा पाउण्ड का कथन है कि '' बिम्ब व्यक्ति चेतना के धरातल पर एक प्रकार का जीवित कालबोध है।'' कवि की बिम्ब सम्पृक्ति ने इस जीवित कालबोध को हमारी अनुभूति का विषय बनाया है। बिम्ब वास्तविकता के विभिन्न स्तरों तक पहुँचने का नितान्त व्यक्तिगत और आत्मपरक मार्ग है। बिम्ब वस्तु या कल्पना का हुबहु चित्र प्रस्तुत करता है। इन बिम्बों के द्वारा किये गये पुर्ननिर्माण का अनुभव पाठक की किसी ना किसी संवदना के स्तर पर करने में सक्षम है। वह वस्तु की अनुकृति नहीं, उसके समानान्तर एक नयी और अभूतपूर्व कृति है। बिम्बधर्मी विशेषणों के कारण भी इन बिम्बों का सघन प्रभाव पाठक मन पर होता हैं। उनके काव्य में बिम्ब मात्र शैली की दृष्टि से ही मौलिक है ऐसा नहीं, बल्कि उनकी वस्तु जगत के प्रति देखने की, प्रतिक्रिया देने की विशिष्ट भावात्मक तथा वैचारिक दृष्टि के कारण भी ये बिम्ब मौलिक बन सकते है। उनके काव्य में बिम्ब एक शब्द में, कभी कुछ पंक्तियों में, कभी श्रृखलाबद्ध रूप में, कभी वर्णन विश्लेषण के उपरान्त, कवि द्वारा प्रस्तुत की गयी टिप्पणीनुमा प्रतिक्रिया में, कभी विशेषणों के प्रयोग में साकार हुए है। कवि द्वारा वर्णित स्थितियाँ उनके बिम्ब विधान में परिलक्षित हुई है। उनके गीतों में बिम्ब की यह प्रतीकात्मकता उत्कर्ष पर पहुँची दृष्टिगोचर होती है। कला निर्मित से लेकर रोजमर्रा के चरमराते जीवनानुभवों तक का व्यापक कैनवास बिम्बों के माध्यम से पाठकों के संवेदन विश्व तक समप्रेषित करना किसी सक्षम कवि का ही कवि कर्म हो सकता है।

(घ) भाषा प्रयोग : श्री विराट की भाषा संवेदना अत्यन्त सघन एवं गंभीर है। उन्हें शब्दों के मर्म की पहचान है और इसलिए वे विषयानुकूल सटीक एवं सार्थक शब्द प्रयोग कर सके हैं। शब्दचयन में उन्होंनें उदारता का परिचय दिया हैं तथा शुद्व तत्सम श्शब्द प्रधान संस्कृत निष्ठ परिष्कृत हिन्दी के प्रति आग्रहवान होते हुए भी विदेशी एवं तद्भव-देशज शब्द स्रोतों से पर्याप्त शब्द चुने हैं। मुहावरों और

लोकोक्तियों के प्रयोग से उनकी भाषा मर्मस्पर्शी बन गयी हैं उन्होंनें प्राय: ऐसे मुहावरों और लोकोक्तियों का प्रयोग किया है जो बहुप्रचलित होने के कारण सुबोध और सहज ग्राह्य है। समीक्ष्य काव्य में लक्षणा और व्यंजना का वर्चस्व है, जहाँ अभिधात्मक प्रयोग हैं वहाँ भी लक्षणा और व्यंजना का संस्पर्श सहज ही अनुभव होता है।

काव्य का समष्टिगत अभिव्यंजना का आधार भाषा ही हैं काव्य में भाषा वैचारिक आदान- प्रदान के लिए यादृच्छिक ध्वनि प्रतीकों को माना गया है। और यही भाषा का कार्य है। कवि की रचनाप्रक्रिया इसी से होकर गुजरती है। इतना ही नहीं कवि का रचनात्मक ताप भी भाषा में ही पिघलता है। गोस्वामी तुलसीदास ने कहा है कि - **''गिरा अरथजल बीचि सम कहियत भिन्न न भिन्न।''** यहाँ शब्द - अर्थ जल और लहर के समान है जिसमें ऊपरी अन्तर तो है पर भीतरी तौर से दोनों समान है। काव्य भाषा कलात्मक भाषा होती है जो हमें कविता को पढने मात्र से प्रभावित करती है, अर्थ उसके गाम्भीर्य को प्रकट करता है। किसी भी रचना की भाषिक प्रासंगिकता या समकालीनता इस बात पर निर्भर करती है कि रचनाकार ने अर्थ की कितनी परतों एवं आयामों को उद्घाटित करने के लिए श्शब्दों का सर्जनात्मक प्रयोग किया है। यदि रचना पाठक को आकर्षित करने, भावना को आर्द्र बनाने में सक्षम ना हो, या उसके विचारो के उद्वेलन में अक्षम हो तो भाषा की सामर्थ्य का प्रश्न उठ खडा होता है, अभिव्यक्ति सदोष हो जाती है। अत: रचना प्रक्रिया में भाषा और भाव दोनों की सिद्वि होनी चाहिए। भाव सिद्धि और शब्द सिद्धि के बिना कारक सिद्धि नहीं हो सकती। वास्तव में अर्थ अन्त: प्रक्रिया में चलता है, पर शब्द ही सौन्दर्य प्रक्रिया को ग्रहण करता है।

रचनाकार अपने वातावरण में संवेदित होता है और उसकी अभिव्यक्ति के लिए सर्जनात्मक तनाव की स्थिति में गुजरता है- अनुसंग रूप में भाषा होती है, जो भाव एवं परिस्थिति अनुसार बदलती रहती है। रामविलास शर्मा के शब्दों में 'शब्दचयन' और रामचन्द्र शुक्ल के शब्दों में 'शब्द संशोधन' की अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी के विचार द्रष्टव्य है-'' भाषा का आधार वह रूप है, जो रचनाकार समाज से स्वीकार करता हैं और इसी के अनुकूल उसकी संवेदना निखरती है, जिसे वह फिर अपनी काव्य भाषा में व्यक्त कर लेता है .....'' यह काव्य भाषा निश्चित सीमा तक कवि के व्यक्तित्व के अनुकूल रूपाकार ग्रहण करती है, पर अपनी आधारभूत सामाजिक भाषा से वह पृथक नहीं हो सकती, जो कि रचनाकार की संवेदना का माध्यम और स्रोत है। इसलिए भाषा के अर्थ-बोध के साथ साहित्य में

संवेदनात्मक गहराई बढती जाती है। प्रसिद्ध भाषा वैज्ञानिक एडवर्ड पीर कहते है कि –'' भाषा ही एक ऐसा साधन है जो प्रत्येक युग के परिवर्तन को, प्रगति, नवीनता सामाजिक एवं नैतिक मूल्यों एवं अनेक विघटन को दिखाने में समर्थ होता हैं। यह भाषा स्वयं ही सम्पूर्ण सर्जनात्मक प्रणाली है..... वह रूपात्मक पूर्णता के लिए हमारे अनुभवों को परिभाषित करती है।

श्री विराट की भाषा में बिम्ब, अलंकार या प्रतीक सहज ही व्यक्त हुए है, सप्रयास नहीं। यहाँ भाषा का उपादान तो है, पर कृत्रिम सजावट नहीं। उनकी भाषा में भाव–बोध की गहनता एवं कवि की सघन संवेदन क्षमता को अनुभूत किया जा सकता है। उनकी भाषा आम जिन्दगी को लक्षित नहीं वरन् पूरी व्यजंकता के साथ आक्रोश को व्यक्त करती है। इन्ही आक्रोशों के द्वारा बाद में संवेदनापूर्ण काव्य– भाषा का जन्म होता है। इसलिए उनकी भाषा जीवन के अनुभवों , लोक संवेदना और मानवीय रागात्मकता की भाषा है।

शब्दों का सीधा सम्बन्ध कथ्य से जुडे आवेगो–संवेगों के साथ भोगे हुए सच के साथ होता है। इसलिए अवांछित कृत्यों का विरोध उसी आवेश के साथ हुआ है जिस तीव्रता से शब्द भीतर से आए है। यहाँ किसी कृत्रिम अलगाव की स्थिति नहीं हैं जबकि कवि में परिवेश से अलगाव है, एक त्रासदी के रूप में।

अनुभव की प्रामाणिकता, सच्चाई और खरेपन की चिन्ता उनकी भाषा में दिखाई देती है। भाषा के स्तर को बनाये रखने के प्रयास मे गीत रचनात्मक तनाव से गुजरता है। श्री विराट जी का काव्य संसार श्शब्दों से विचारों तक उनके रचनात्मक कर्म और प्रयोजन को परिभाषित करता है और उनके अनुभव मूलों की थाह भी लेता है। श्शब्दों से खेलना और आवश्यकतानुसार उन्हें नये अर्थो में खपा लेना उनकी विशेषता है। श्री विराट के लिए गीत एक लम्बी प्रक्रिया है, चीजों को वस्तुपरक और जटिल तथा दूरगामी सम्भावनाओं को जाँचने की एक सम्यक विधि है– वह किसी तात्कालिक उद्वेग की स्वत: स्फूर्त अनायास अभिव्यक्ति नहीं है। यह केवल मनोरंजन और रोमांटिक स्तर पर नहीं है और न हीं केवल बौद्धिक चिन्ता और संघर्ष का परिणाम है। वास्तव में उनके गीत समकालीन वास्तविक स्थिति का कठोर साक्षात्कार है, परिणामत: वे रचना प्रक्रिया की जटिलता और उसके पीछे कार्यरत रचनात्मक संघर्ष को प्रमाणित करता है। अनुभव की अद्वितीयता और श्शब्दों की गरिमा के बहुप्रचारित दावों के समानान्तर श्री विराट ने व्यवहारवादी रुझान से कविकर्म की नयी सम्भावनाओं को जोडकर देखा और दैनिक जीवन में श्शरीक साधारण चीजों को अचानक गीत की भाषा में उपलब्ध करवाकर एक नये काव्यात्मक सम्बन्ध का साक्ष्य

रचने की कोशिश की है। श्री विराट जी जिन्दगी के बारे में एक गहरी समझ रखते है। वे शिक्षित संवेदना के कवि है। बुनियादी तौर पर रूमानी स्वभाव प्रकृति के जो सुन्दर चित्र आलोकित करता है, वे सूक्ष्म स्तर पर अपना मानवीय अर्थ प्रकट किये बिना रह नहीं पाते। प्रकृति का रागात्मक साहचर्य गीतकार को उडने के लिए प्रेरित करता है।

इस गीतकार के गीतों ने न केवल भाषा की शक्ति को नया बनाया, अपितु स्थिति का विश्लेषण भी किया। उनके गीतों में शब्द बुलेट का कार्य करते है। श्री विराट के यहाँ समाज की असामान्य गतिविधि को पकडने की कोशिश शान्त और आत्मचेतस् है।

गीत के शब्द हमें आमंत्रित करते है, केवल आनन्दित होने के लिए नहीं– सोचने और निर्णय लेने के लिए नहीं– बल्कि भीतर तक महसूस करने के लिए– एक जटिल अनुभव को उपलब्ध करने के लिए जो शब्दों में प्रत्यक्ष है। व्यवस्था के दबाव से श्री विराट जी की छटपटाहट और विकलता का सीधा समबन्ध है।

श्री विराट की काव्यभाषा भावानुकूल है। उसमें भावों एवं विचारों की सरलता एवं गंभीरता के अनुरूप भाषिक रूप निश्चित किया गया है। इसलिए उसमें गम्भीर अर्थवेत्ता सर्वत्र सुलभ है। अपनी अर्थ गाम्भीर्य के कारण यह भाषा रचनाकार की अभिव्यंजनात्मक क्षमताओं को भी समृद्ध बनाती है। भाषा को समृद्ध बनाने के लिए शब्द चयन में कवि ने सावधानी बरती है। सामान्यतया उनकी रूचि तत्सम शब्दों के प्रयोग में है और वे खडी बोली के सहज, सरल किन्तु संस्कृतनिष्ठ स्वरूप को प्रयोग करने में रूचि रखते है। तथापि जहाँ उन्हें अर्थगौरव की दृष्टि से संस्कृत शब्द स्रोतों से प्राप्त तत्सम शब्दों द्वारा अभीष्ट अर्थ की प्राप्ति नहीं होती, वहाँ वे अरबी, फारसी, अंग्रेजी या अन्य भाषाओं के शब्दों को जो हिन्दी में प्रचलित है नि:संकोच ग्रहण करते हैं।

तत्सम शब्द : श्री विराट के शब्द भण्डार में तत्सम शब्दों का बाहुल्य है। वे हिन्दी के तो समर्थ कवि हैं, मराठी मूल होने के कारण मराठी और उसमें व्याप्त संस्कृत प्रभाव के कारण संस्कृत प्रयोग से भी सुपरिचित हैं। उन्हें शब्दों के मर्म की पहचान है और प्रसंग की आवश्यकतानुसार उपयुक्त शब्द चुनने में वे सफल रहते है। उनके काव्य में निरन्तर प्रयोग होने वाले कुछ तत्सम शब्द इस प्रकार है– कोलाहल, एंकाकी, अम्बर, अन्तर आदि।

संस्कृत शब्द : हिन्दी भाषा– विभाषा शब्द समूहों में श्री विराट ने संस्कृत शब्दों को प्रधानता दी है। अनेक शब्द जो हिन्दी में अप्रचलित हैं उन्हें कवि ने प्रयोग किया है। उन्होंनें संस्कृत प्रत्ययों के

आधार पर हिन्दी शब्दों को ढालते हुए उन्हें नए अर्थ प्रदान किए है। जैसे:- मसृण, हस्त, त्रियक, पगार, सम्पृक्त, स्यात् आदि।

तद्भव श्शब्द : यद्यपि श्री विराट के मूलवृत्ति तत्सम प्रधान है किन्तु फिर भी उनकी काव्य साधना में तद्भव शब्दों का भी प्रचुर योगदान है। उन्होंनें तद्भव शब्दों को तत्सम एवं अर्द्धतत्सम श्शब्दों की संगति में इस प्रकार प्रयोग किया है कि वे अलग ही अपना सौन्दर्य व्यक्त करते है। उदाहरणत: मरूस्थल, प्यास, पत्थर, वनवास, हलदी, सूरज, दूध आदि।

देशज शब्द : यहाँ यह उल्लेखनीय है कि समीक्ष्य काव्य में देशज शब्द केवल वहीं प्रयोग हुए है, जहाँ कि भाव और प्रभाव की दृष्टि से उन जैसा प्रभावोत्पादक अन्य शब्द तत्सम एवं तद्भव शब्दों के भण्डार में दुर्लभ रहा है। श्री विराट मालवा निवासी है अत: उनके काव्य में अधिकांश शब्द मालवी के है। जैसे:- चिनगी, मोतिया, दूधिया, पंखिया, चन्द्रिमा, बंसवट, मैके आदि।

विदेशी शब्द : अरबी, फारसी, अंग्रेजी या अन्य भाषाओं के शब्दों को उन्होंनें अर्थ की आवश्यकतानुरूप प्रयोग किया है।

शब्द शक्तियाँ :

नभ से गिरी मगर सब खुशियाँ
अटकी रही खजूर में
अंधों को मिल गयी बटेरें
किन्तु रात ही रात में
नाक में ज्यों नकेल लगती है
मूक कोल्हू का बैल लगती है
घर से दफतर की जिन्दगी सीमित
इक खुली मुक्ति जेल लगती है।

छन्द विधान : ''छन्द पादौ तु वेदस्य'' अर्थात छन्द वेद के चरण है। यह कहकर विद्वानों ने साहित्य में काव्य क्षेत्र में छन्द के महत्व को स्वीकारा हैं। जिस प्रकार चरण विहीन व्यक्ति अपनी क्षमता के आधार पर अधिक दूर तक जाने में समर्थ नहीं होता, ठीक उसी प्रकार छन्द रहित काव्य भी गंभीर और स्थायी प्रभाव नहीं डालता, वह शीघ्र ही विस्मृति के गर्त में समाप्त हो जाता है। इस तथ्य का साक्ष्य

समसामयिक तथाकथित गद्यप्रधान छन्द –लय–हीन काव्य के अल्पप्रभाव से प्रमाणित है। चाहे मंचीय काव्य हो अथवा फिल्मी गीत सर्वत्र छन्द लय युक्त काव्य ही समादृत है, उससे मुक्त काव्य की प्रतिष्ठा और प्रभाव तुलनात्मक दृष्टि में अत्यन्त सीमित है। आधुनिक युग के सुकवि इससे सहमत है इसलिए छन्द मुक्त कविताओं के समस्त आग्रह– आन्दोलनों से बचकर छन्दयुक्त काव्य के सृजन में रत है। श्री विराट ने न केवल व्यवहारिक रचनास्तर पर अपितु सैद्धान्तिक स्तर पर भी काव्य में छन्द की सुप्रतिष्ठा हेतु सफल प्रयत्न किया है। उनका विचार है कि छन्द और लय से ही कविता काव्य संज्ञा की अधिकारिणी बनती है–

वह कविता, कविता क्या जिसमें
कोई लय या छन्द नहीं हो,
वह जीना क्या जीना जिसमें
जीने का आनन्द नहीं हो
बिक न जाये अगीतों के हाथ
गीत की जागीर! उठ

श्री विराट ने निराला की मुक्त छन्द अवधारणा पर युक्ति–युक्त दृष्टि देकर लिखा है–

''मुक्त छन्द दे गये निराला
छन्द मुक्त तो नहीं किया था
दी थी मुक्ति वर्ण मात्रा से
पर लय का संस्कार दिया था
छन्द मुक्ति की सुविधा लेकर
घोर अकवि भी कवि बन बैठे
जुगनू के भी योग्य नहीं थे।
काव्य गगन के रवि बन बैठे।।''

लगभग तीन दशक काव्य कानन में छन्द मुक्ति का काक कर्कश स्वर भरने के बाद गीत,गजल और दोहे के नाम पर पुन: छन्द की ओर वापसी के स्वर गूँजने लगे है।श्री विराट ने इस तथ्य को इन शब्दों में व्यक्त किया हैं–

'' अब भी भटक रहें हैं पहुँचें नहीं कहीं भी

जे गीत के शिखर से प्रस्थान कर गये थे।
वे लौटने लगे हैं फिर छन्द की शरण में
जे छन्द के मरण का ऐलान कर गये थे।।''

अपनी उपर्युक्त सैद्धान्तिक मान्यताओं को व्यावहारिक निरूपण श्री विराट ने समीक्ष्य काव्य में दो रूपों में किया हैं प्रथमत: हिन्दी के मात्रिक छन्दों की शास्त्रीय प्रस्तुति करके । श्री विराट के गीतों में जिन पारम्परिक छन्दों की बार-बार प्रस्तुति हुई हैं, उनमें चौपाई, शिव और गीतिका छन्द मुख्य है। उदाहरणत:-

चौपाई छन्द- १६ मात्राएँ, ४ चरण और ६४ मात्राएँ

''अदना और अनाम आदमी
जी हाँ मै हूँ आम आदमी
थोडा अपने दायें बायें
देंखें तो मुझको ही पायें

शिव:- ११ मात्राएँ,४ चरण ,४४ मात्राएँ

यह बहार किसलिए,
यह सिंगार किसलिए
गर्दिशों में प्राण की
यह पुकार किसलिए।

वीर छन्द:- ३१ मात्राएँ,८,८ एवं १५ पर यति

अशुभ न बोलो, खून न ढोलो, अपनी धरती अपना देश
कदम मिलाओ, मिलकर गाओ, जय जय अपना राज स्वदेश

गीतिका छन्द:- २६ मात्राएँ १४,१२ पर यति

सिर्फ कठपुतली बनो मत और अपने आप को
क्रूर सत्ता के करों का झूनझुना बनने न दो।

५.४ समग्र मूल्यांकन :

वस्तुत: विराट का काव्यत्व उनके कवि व्यक्तित्व के प्रौढ स्वरूप को प्रदर्शित करता हुआ विकास के नये आयामों को प्रोद्भासित करता है। उन्होने एक ओर परम्परा को सम्मान दिया है तो दूसरी ओर

आधुनिक जीवन की जटिल संवेदनाओं को सहजता से प्रस्तुत कर नव्य चेतना को अनुकूल समर्थ अभिव्यक्ति प्रदान की है। उनके गीत अनुभूत जीवन की अभिव्यक्ति के गीत है और मन की सहज प्रक्रिया से जन्मे है। अत: उनमें गीतिकाव्य की समस्त विशेषताएँ नवीन भाव बोध और नवीन अभिव्यक्ति शैली के परिप्रेक्ष्य में उपलब्ध होती है। अस्तु, रस सिद्ध, सुप्रतिष्ठित, बहुचर्चित, दर्द के गायक और एक सामर्थ्यवान आस्थावान कवि के रूप में भी विराट आधुनिक हिन्दी गीति परम्परा में अपना महत्तवपूर्ण स्थान रखते है। इसलिए श्री दिनेश सौनवलकर का यह कथन सत्य प्रतीत होता है कि ऐसे गीतकार का सृजन निश्चय ही पिछले दशक की महत्वपूर्ण उपलब्धि है।

श्री विराट गीत में सर्वाधिक स्थान विराट को देते है। भाव के बाद वे मानते है कि गीत को छन्दबद्ध ही होना चाहिए। बिना छन्द के गेयता नहीं आ सकती हैं। इसी तरह गीत रचना का अपना एक प्रवाह होने के साथ ही उसमें एक प्रतिध्वनि होती है। इसे अनुगूँज भी कह सकते है। उन्होंनें यथासम्भव उर्दू शब्दों के भी हिन्दी भाषा में उपलब्ध शब्दों का ही प्रयोग किया जाता है। अनेक बार उन्होंनें शब्द को नये रूप भी दिये हैं।

कथ्य और शिल्प की दृष्टि से विराट की गजलों में एक निश्चित विकास परिलक्षित होता हैं। कथ्य में उसकी संवेदना मुख्य रूप से प्रेम सौन्दर्य चित्रण तथा आम आदमी की त्रासदी से जुडी हुई है। व्यवस्था या सत्ता के चलते मनुष्य के जीवन में जो विवशता पैदा हो गई है उसका तीखा दंश हमें उनके गीतों में मिलता है। वे प्रेम में जितने गहरे हैं, आम आदमी के जीवन संघर्ष चित्रण में वे उतने ही साहसी और यथार्थवादी हैं। रूप की ललक और उसके चित्रण में उतने ही करूणावान और विक्षोभ से भरे है। जीवन की लंबित अनुभूतियों के चित्रण में वे जितने क्रांतिदर्शी हैं, विसंगतियों के खिलाफ लडने में वे उतने ही क्रांतिमुखी है।

वे एक कोमल कमनीय गीतकार हैं, पर विराट जी ने अपने दर्द को साज और आवाज दी है। उन्होंनें अपने रचनाकाल में हिन्दी साहित्य को १४ गीत संग्रह एवं १२ गजल संग्रह दिये। उनकी भाषा संवेदना अत्यन्त सघन और गंभीर हैं। वे विषयानुकूल सार्थक और सटीक शब्द प्रयोग करते है। शुद्ध तत्सम प्रधान संस्कृत निष्ठ परिष्कृत हिन्दी शब्दों के प्रति आग्रहवान होते हुए भी उन्होंने उदारता पूर्वक विदेशी एवं तद्भव शब्दों का भी चयन किया है।

❑❑❑

• अध्याय - ६ •

आधुनिक हिन्दी गीतकार और श्री चन्द्रसेन विराट के गीत

आधुनिक हिन्दी गीतकार और चन्द्रसेन विराट के गीत

आधुनिक युग की उलझनों के बीच संगीत के माध्यम से निराशा में डूबे समाज को राहत देने का काम करता है। प्राय: गीत विधा पर रोमानियत,रूप सौन्दर्य और नारी सौन्दर्य के चित्रण के साथ ही श्शास्त्रीयता का आरोप लगाया जाता है और उसकी अपेक्षा की जाती रही है।

चन्द्रसेन विराट पिछले पाँच दशकों से गीत विधा के लिए समर्पित हस्ताक्षर है। हिन्दी की कविता विधा में अनेक आंदोलन आए और गए, किन्तु विराट जी एक ऐसे गीतकार है, जो किसी भी गीतधारा से कभी भी प्रभावित नहीं हुए और उन्होंनें जिस गीत विधा से अपनी रचनायात्रा प्रारम्भ की, उसे बखूबी अब तक निभाते रहे है।

(१) नरेश मेहता : ये हिन्दी के ऐसे प्रगतिशील कवि है, जिनके पास कल्पना, भाव, विचार और भाषा की अपार शक्ति मौजूद है। इनके काव्य में इतिहास और संस्कृति का अद्‌भूत समन्वय मिलता है। उनके काव्य में भाषा की प्रौढता के साथ-साथ प्रयोगशीलता भी है। उनकी भाषा में उनके व्यक्तित्व का अध्ययनशील रूप स्पष्ट दिखाई देता है। जहाँ कवि का परम्परा के प्रति आस्था का भाव सजग है, वहीं रूढियों के प्रति उसका अंतर विद्रोही है। देश के नवनिर्माण के प्रति वह अधिक सचेष्ट है। 'दूसरा सप्तक' में इनकी कुल दस विविध श्शीर्षकों वाली कविताओं का संकलन है, जो इस प्रकार है- १.'चाहता मन, २. अंह, ३. किरन धेनुएँ, ४. उषस्-१, ५.उषस्-३, ६. उषस्-४, ७.जनगरबा चरैवैति, ८.उषस् ९.अश्व की वल्गा, १०.समय देवता।

उनकी यह कविता पाठक को गहराई से संवेदित करती है कि वह अवसन्न हो उठता है-

'तुम यहाँ बैठी हुई थी अभी, उस दिन

सेब- सी बन लाल

चिकने चीड सी वह बाह अपनी टेक पृथ्वी पर यहाँ

इस पेड जड पर बैठ

मेरी राह में, इस धूप में।
बह गया वह नीर
जिसको पदों से तुमने छुआ था।
कौन जाने धूप उस दिन की कहाँ है।
जो तुम्हारे कुन्तलों में गरम फूली
धुली, धौली लग रही थी।

प्रयोगवाद के लघु मानव और खण्डित मानव के स्थान पर वे विराट मानवता और अखण्डता पर विश्वास करते है। मानवता का अंकन करने के लिए समय देवता का आव्हान कवि की मौलिक कल्पना है।

(२) धर्मवीर भारती : विशुद्ध प्रकृति चिन्तन से लेकर मानवीय भावनाओं को उद्दीप्त करने एवं अनुभूतियों को आलंकारिक रूप में मुखरित करने की प्रवृति उनकी अनेक कविताओं में परिलक्षित होती हैं। प्रणय और प्रकृति की व्यक्तिनिष्ठ अनुभूतियों के उपरान्त समसामयिक जीवन की विसंगतियों की यथार्थ अभिव्यक्ति 'सात-गीत-वर्ष' की अनेक कविताओं में व्यक्त हुई है। भारती के काव्य में निहित आस्था ही मानव को मुक्त कर सकती है, क्योंकि आस्था की ताकत मानव की सबसे बडी शक्ति है। संघर्ष की अग्नि में तपकर कवि की प्रतिभा में भी निखार आया है। भारती जी के अनुसार- कविता ही वह संजीवनी है, जो सुकुमार संवेदनाएँ जगााकर, अन्तर्जगत को मानवोचित कर, मूर्छित मानव मूल्यों को फिर से प्रतिष्ठित कर सकती हैं।

प्रेम की अभिव्यंजना भारती जी के काव्य की पहचान हैं, जो संपूर्ण रचना कर्म में झंकृत हुई हैं। कवि की संवेदना, ताकत एवं सार्थकता सब कुछ प्रेम ही है, जो जीवन के अंतिम क्षणों तक उन्हें सृजन की प्रेरणा देती रही। स्व से सर्व की तरफ मोडा और वे मानवीयता को अर्थ एवं नूतन असितत्व प्रदान किया है। महानगरीय जीवन जीने वाले भारती जी का झुकाव गाँव की ओर अधिक रहा है। भारती समसामयिकता के यथार्थ परिवेश से द्रवीभूत हो, मानव मूल्यों की तलाश करने के लिए संघर्षरत रहे हैं। मानव मुक्ति की आंकाक्षा एवं मानवीयता की पुन: स्थापना करने का भाव लिए कवि की बैचेनी अपनी कविताओं के माध्यम से जिन्दगी की लय पाने की रही है।

भय, दहशत और स्वार्थी व्यावसायिकता से भरपूर हिंसक राजनीति की आपातकालीन परिस्थितियों और घटनाओं के परिदृश्य को भारती जी ने मुनादी काव्य में व्यंग्य के साथ उजागर किया है।

(३) गिरिजा कुमार माथुर : व्यास सम्मान से सम्मानित कवि का प्रथम काव्य संग्रह मंजीर है। इस संग्रह की रचनाओं में स्पष्ट ही उत्तर छायावादी संस्कारों को रेखाकिंत किया जा सकता है। छायावाद व प्रगतिवाद के सन्धिकालीन परिवेश को समेटे हुए १९४६ में नाश और निर्माण का प्रकाशन हुआ। पुरातन मोह और नवीन आकर्षण द्वन्द उपरोक्त कृति की कविताएँ स्पष्ट कर तत्कालीन कवियों की द्वन्दमय मन:स्थिति का प्रतिनिधित्व करती है। ध्वंस और निर्माण के परिप्रेक्ष्य में जीवन के दो पक्षों को उजागर किया है।

धूप के धान नामक कविता संग्रह में कवि ने अपनी चेतनाभूमि को व्यापकता दी है। कवि टिकने के लिए जिस विराट भूमि की तलाश में निरन्तर संलग्न था यहाँ आकर उसकी चेतना व्यापक सूत्रों की खोज कर सन्तोष प्राप्त करती है। प्रेम, सौन्दर्य, रूप, रंग के प्रति रोमानी आसक्ति इस संग्रह में भी विद्यमान है लेकिन इसके साथ आशावादी स्तर, मानवजीवन और उसके स्वर्णिम भविष्य के प्रति अखण्ड विश्वास और सामाजिक वैषम्य से विद्रोह करती हुई कवि की प्रखर सामाजिक दृष्टि सभी इस कृति में देखा जा सकता है।

शिला पंख चमकीले के प्रारम्भ में कवि ने लिखा है कि साहित्य जगत में संक्रान्ति पूर्ण आस्था के कारण ही नयी संवेदना की आवश्यकता अनुभव की गई, परिणामस्वरूप श्शनै:शनै: नयी कविता का उद्‌भव हुआ और कालान्तर में यही विकास प्रक्रिया के बिन्दु साहित्यिक धारा के रूप में परिवर्तित हो गए। डॉ. रमाकान्त शर्मा के श्शब्दों में– ''शिल्प के क्षेत्र में माथुर जी ने पुरानी परम्परा से भिन्न निजी लाक्षणिक श्शैली का निर्माण किया है। श्शब्द, भाषा और छन्द की दिशा में अनेक प्रयोग किए हैं। परम्परागत छन्दों को नया मोड देते हुए अन्य भाषाओं तथा लोकसाहित्य के छन्दों को भी नवीन परिष्कार देकर इन्होंनें अनेक नए छन्दों का निर्माण किया है। वस्तु और शिल्प दोनों क्षेत्रों में इनकी समन्वयवादी दृष्टि ने कई कविता को पुरानी परम्परा के विरोध में न रखकर उसके स्वस्थ अंगों की स्वीकृति द्वारा नईश्शक्ति और गति दी है। वैसे माथुर को मांसल प्रेम का कवि माना गया है, लेकिन उन्होंनें जीवन के यर्थाथ को महतव दिया है। वे अस्तित्ववादी दर्शन से प्रभावित हैं। फलत: उनके काव्य में वेदना और विषाद की गहरी छाया दिखाई देती है। आधुनिक सौन्दर्यबोध तथा परिष्कृत भावाभिव्यक्ति के क्षेत्र में माथुर बेजोड है।''

नूतन प्रयोगों और वैयक्तिक चेतना के सृजनशील कलाकार होते हुए भी उनकी अधिकतर रचनाओं का उत्स बिन्दु सामाजिक जीवन के नूतन निर्माण की साग्रह आतुरता और सामान्य जीवन की विकासोन्मुख दीप्त आस्था में प्रवाहित है। उनकी कविता में जीवन के प्रति स्वीकृति है, उल्लास है, आशा का स्वर है, प्रकृति से लगााव है, जमीन से रिश्ता है।

(४) बलवीरसिंह रंग :

किसी तरह भी करो राष्ट्र को बंधनहीन करो
आज दुख सहने पर भी रोक
आज कुछ कहने पर भी रोक
बंधन की इस परम्परा को साधनहीन करो
तुम्हारे आगे युग निर्माण
तुम्हारे पीछे जन–मन–प्राण
पशुता के पागल प्राणों को कंपनहीन करो
एक को शोक एक को हर्ष
मिटा दो यह श्रेणी संघर्ष
मानवता की शपथ मनुज को क्रंदनहीन करो।

लोकप्रिय कवि रंग आजादी की लडाई से प्रत्यक्षतया जुडा हुआ यौद्धा प्रवेश गीत, संझ सकारे, संगम, मेरा गांव गरीब है, सिंहासन और उनकी अंतिम कृति गंध रचती छन्द उनके व्यक्तित्व की छाया प्रकट करती है। रंग जी ने गजल के शरीर में गीत की आत्मा को प्रविष्ट करा देने का अभिनव प्रयोग भी कई बार सफलतापूर्वक कर दिखाया है।

(५) गोपालदास नीरज : पिछले चार दशकों से निरन्तर अपनी वाणी से मंच पर गूंजने वाले श्रुति मधुर स्वर के स्वामी, अपने गीत के जादू से श्रोताओं को सम्मोहित, रसालोडित करने वाले कवि नीरज अपने आप में एक विशिष्ट व्यक्तित्व हैं। वर्तमान मंचीय कवियों में से नीरज जी एक ऐसे कवि हैं जिन्होंनें पारम्परिक गीत को नष्ट होने से बचाया और उसकी साहित्यिक मर्यादा को सुरक्षित रखा है।

नीरज जी की सामाजिक और राजनैतिक चेतना और मानवीय संवेदना इतनी प्रबल है कि देश तो देश, विदेश में भी घटित किसी अन्यायपूर्ण प्रकरण पर वे मौन नहीं रह सकते, एक जागरूक स्वतन्त्र चेतना से युक्त जनतांत्रिक नागरिक की हैसियत से वे अपनी श्सशक्त काव्य वाणी के माध्यम से निर्भीक प्रतिक्रिया प्रकट करते हैं और निडर होकर सही का समर्थन और गलत का विरोध करते हैं।

नीरज के गीत मंच पर भले ही अधिक लोकप्रिय ना हुए हों पर उनमें भावना की गहराई, अनुभूति की प्रामाणिकता, सहजता, संवेदनीयता, अभिव्यक्ति की चारुता यानी गीत के कलात्मक मूल्यों की दृष्टि

से अपूर्व और अनुपमेय है। उनकी कृतियों में विभावरी, प्राण गीत और दर्द दिया है उत्कृष्ट है। सामाजिक दायित्व के प्रति आरम्भ से ही सजग कवि नीरज देश की गरीबी, भूख, बेकारी, स्त्रियो का श्शोषण जैसे विषयों को अपनी लेखनी का आधार बनाया। अपनी कविता **'अब युद्ध नहीं होगा'** में प्रकृति और मानव जीवन की हरीतिमा का चित्ताकर्षक चित्रण करते हुए युद्ध के संभावित परिणामों की विभीषिका की तरफ कवि ने ध्यान दिलाया। शांति के पक्षधर नेताओं के सत्प्रयासों में पूर्ण आस्था व्यक्त करते हुए कवि ने कविता के उपसंहार को निराशा के अंधकार के बजाय आशा के प्रकाश की तरफ मोड दिया है। नीरज की गीत शैली में एक हिस्सा आत्मा-परमात्मा के रागात्मक संबंधों पर आधरित रहस्यवादी श्शैली के प्रेम गीतों का भी हैं।

(६) शंभुनाथ सिंह : छायालोक में जीवन और जगत के रंगीन चित्रों को आधार बनाकर छायालोक के अनेक गीत उपजे हैं तो उदयाचल में बाह्य जगत की पृष्ठभूमि पर उभरे हुए व्यक्तिगत जीवन के विश्वास, विद्रोह आदि की भावनाएँ स्फुरित हुई है। एक ही समय में दो विपरीत दिशाओं (स्वप्न और यथार्थ) की तरफ संचरण को उचित और स्वाभाविक ठहराते हुए कवि लिखता है कि-''जीवन में यदि कल्पना और स्वप्नों को सत्य और यथार्थ के साथ समझौता करके बने रहने का अधिकार है तो काव्य में भी दोनों तरह की भावधाराएँ निर्विरोध रूप से साथ-साथ प्रवाहित होती रहेगी। मन्वंतर में सृष्टि के आरम्भ काल से आज तक की जीवन यात्रा में सुख-दुख, धर्म-अधर्म, न्याय-अन्याय आदि से संबधित अनेक ऐतिहासिक दृश्यों के साथ मनुष्य के अपराजेय संकल्प और कर्मनिष्ठा का लेखा- जोखा प्रस्तुत किया गया है। दिवालोक में वैयक्तिक चेतना की सीमाओं से संघर्ष करते हुए वस्तुजगत और लोकजगत को अंगीकार करने की सतत चेष्टा का दावा निराधार नहीं है।''

गीत की प्रासंगिकता पर उनका कहना है- गीत वह माध्यम है, जो मनुष्य के अंतर्लोक को उसकी समग्रता में अभिव्यक्त करता है। उसमें भावनाओं और मनोदशाओं की सूक्ष्म तंरगों को पकडकर रूपायित करने की जो शक्ति है, वह काव्य की अन्य किसी विधा में नहीं है। यह तर्क आधारहीन है कि आज के बौद्विक, वैज्ञानिक और यांत्रिक युग में गीत की कोई प्रासंगिकता नहीं रह गई है। वास्तविकता तो यह है कि आज का मानव समाज वैज्ञानिक और यांत्रिक प्रगति के तीव्र प्रवाह में जिस गति से बहता जा रहा है, उससे उसकी मानवीयता ही खतरे में पड गई है। जीवन मूल्यों की ओर मनुष्य को पुन: उन्मुख करने की दृष्टि से गीतकाव्य की उपादेयता को झुठलाया नहीं जा सकता। ग्रामप्रधान भारत देश को जनजीवन के साथ जोडकर रखने में कविता ही गीतात्मक और छन्दोबद्ध हो सकती है।

(७) वीरेन्द्र मिश्र : वीरेन्द्र जी अपनी काव्य साधना के प्रति अत्यन्त सजग, समर्पित, और निष्ठावान रहे है। उन्होंनें गीतों और प्रगीतों से सम्बन्धित ११ कृतियाँ लिखी है इनके अतिरिक्त चार सौ पृष्ठों का वृहत संकलन गीत विविधा भी है। सृजन और संघर्ष की प्रेरणा उन्हें अपने पिता से मिली। सामाजिक चेतना वीरेन्द्रजी के व्यक्तित्व, संघर्षशील जीवन और उनके विश्वासों से घनिष्ठता से जुडी है। वीरेन्द्र मिश्र के कितने ही गीतों में यह तरलता, सौन्दर्यानुभूति की यह स्निग्धता, शिल्प की चारूता और भाषा की सहजता एक साथ दिखाई देती है। जीवन संघर्षो में अविराम जुझते हुए भी जीवन की शाश्वत सौन्दर्य सत्ता की अवेहलना उन्होंनें कभी नहीं की, उसके प्रति नीरस विरक्ति का एक कण भी उनके काव्य में नहीं है।

(८) रमानाथ अवस्थी : पिछले चार दशकों में उन्होंनें मात्र १०० गीतों की रचना की है। वे एक समर्पित गीत शिल्पी की सक्षम लेखनी के अनुरूप भले ही ना कही जाये पर किसी रचयिता के सृजन एवं शिल्प को गुणवत्ता की अपेक्षा परिमाण के आधार पर परखना पडे ये सही नहीं हैं।

रमानाथ जी ने भले ही सीमित सृजन किया है, पर उनकी गीत सृष्टि के तीन प्रमुख आकर्षण है– अनुभूति की रागात्मकता, उस रागात्मक अनुभूति के मेल मे आए विचार सूत्रों अथवा सूक्तियों का संतुलित उपयोग और नितान्त सहज, सरल अभिव्यक्ति यानि भाषा की विलक्षण सादगी। कवि का मानना है कि अगर काव्य रचना पाठक के ह्मदय को थोडा भी छू सके तो वह सार्थक है। कवि आगे कहते है कि मैं स्वान्त सुखाय के लिए ही काव्य सृजन करता हूँ। अवस्थी जी के गीत उनके अपने जीवन और व्यक्तित्व के सीधे–सादे छवि चित्र हैं और उनका प्रयास यह है कि उनके जीवन चित्रों में ही पाठक अपना जीवन चित्र अनुभव करे।

अभिव्यक्ति की चारूता के साथ वे जीवन यथार्थ को अधिक तीव्रता से अनुभव करने लगे हैं, आत्म निरीक्षण की भूमि पर उतर कर वे हमें किसी कठोर सत्य से आँख मिलाने को वे विवश करते हैं। जीवन की अस्थिरता और मृत्यु की अनिवार्यता के निर्मम एहसास के बीच भी वह मानवीय ममत्व और संवेदना के सूत्र छोडने को तैयार नहीं हैं, वरन् जीवनावस्था के प्रति पूरी तरह समर्पित दिखाई देती है।

अपना ही चेहरा चुभता है काँटें जैसा
जब संबंधों की मालाएँ मुरझाती हैं।
कुछ लोग कभी जो छूटे पिछले मोंडों पर
उनकी यादें नींदों में आग लगाती है।

निष्कर्ष : अनेक आधुनिक गीतकारों के साथ विराट जी की रचनाओं का मूल्यांकन करने पर ये स्पष्ट हो जाता है कि विराट जी के मन में विरहिणी बैठी है, जिसके दर्द को वे गीतों में अभिव्यक्ति देते रहे है। वे अपने आप में एक ऐसे व्यक्तित्व के धनी है जिन्हें यश और मान-सम्मान की कभी चाह नहीं रही उनकी लेखनी सदैव ही सामाजिक बदलाव के प्रति सजग बनी रही।

• अध्याय - ७ •

चन्द्रसेन विराट के गीतों में समसामयिक चिन्तन एवं चेतना की अभिव्यक्ति

किसी भी कृति एवं व्यक्तित्व पर उसके आस-पास के वातावरण एवं परिस्थितियो ंका प्रभाव पडता ही है। क्योंकि मानव एक सामाजिक प्राणी हैं अत: अपने आस-पास की परिस्थितियों से प्रभावित होना निसन्देह स्वाभाविक हैं। किन्तु रचना के सम्पन्न होते ही उसके लिए ये आवश्यक हो जाता है कि वह पाठकों तक सम्प्रेषित हो। यह रचनाकार की क्षमता है कि वह अपने सर्जनात्मक अनुभव या शब्दों को कहाँ तक सम्प्रेष्य बना पा रहा है। यह रचना का सरलीकरण नहीं अपितु रचना और रचनाकार दोनों के लिए एक कठिन चुनौती है किन्तु यदि पाठक की संवेदनात्मक शिराएँ सजग ना हों तो,रचना का यह सम्प्रेषण कठिन हो जाता है जो रचनाकार का अभीष्ट होता है।

''आयु भर हम अक्षरों की रचना करते रहें,
छन्द में ही काव्य की नवसृजना करते रहें,
स्वर मिले वह साँस को, हर कथ्य जो गाकर रहे,
जिन्दगी के सुख-दु:खों की व्यंजना करते रहें
वक्ष का रस स्रोत सूखे दिग्दहन में भी नहीं
नित्यनीरा वेदना की वन्दना करते रहें।''

प्रस्तुत अध्याय में विराट के समस्त गीत संग्रहों का अध्ययन इस दृष्टि से किया गया है कि कवि का रचनाशील सृजन तत्कालीन युगीन स्थिति को किस प्रकार निर्भीकता पूर्वक अभिव्यक्ति देता है एवं युगीन स्थितियों से वह किस स्तर तक प्रभावित हुआ है?

प्रासंगिकता और सृजनशीलता, प्रतिबद्धता और अजनबीपन, जादुई और क्रान्तिकारी, यथार्थ और अयथार्थ, तात्कालिक और मिथकीय, सपाट और काव्यात्मक के तनाव में आज के गीत हमारे समय के मार्मिक साक्ष्य बन चुके है। आज का गीत दर्द पर चीखने की अपेक्षा समझदार चुप पर अधिक भरोसा करता है। इसी अर्थ में वह पहले से कहीं अधिक वयस्क संवेदन का प्रमाण देता है। अनुकरण और अनुभव

मे ंफर्क करने की माँग गीत हमसे करता है। आस-पास के वातावरण के प्रति जैसी सजग प्रतिक्रिया आज के गीत में प्रकट हुई है। वस्तुओं की जो व्यक्त और अव्यक्त टकराहट गीत में प्रकट हुई है, वह रचनात्मक समझ और भाषा का बिल्कुल नया अनुभव है। प्राचीन काल में गीत में प्रयुक्त वस्तु सन्दर्भ केवल बाह्य अलंकरण की तरह प्रकट होते थे, वे किसी दूसरी वस्तु के उद्दीपन के लिए होते थे- किन्तु अब वे अपने आप में, एक स्वायत्त स्थिति में भी व्यवस्था और व्यक्ति के बीच पसरे गहरे तनाव को व्यक्त करता है। यह सजगता गीतकारों को एक विनम्र आत्मपरीक्षण की ओर ले जाती है।

चन्द्रसेन विराट अपने समय के प्रति उतने ही सजग रहे है, जितने शिल्प के प्रति वे माने जाते हैं। यहाँ तक कि उन्होंने हिन्दी गजल को मुक्तिका और श्शेर को द्विपदी नाम दिया है। गीत और गजल को उर्दू शब्दावली से मुक्त कर उन्होंनें उसे हिन्दी का शुद्ध रूप दिया है। साथ ही गीत के मूल भाव को सुरक्षित रखते हुए उसमें विविध नये-नये प्रयोग किये हैं। उनके गीतों में समय की निमर्मता, समाज की यात्रा, संप्रास, घुटन आदि निम्न उदाहरण में दर्शनीय है-

''बहरों का दरबार, जोर से बोल यहाँ
मिमिया मत हुँकार, जोर से बोल यहाँ
इनके कान निवेदन नहीं सुना करते,
सुनते है ललकार, जोर से बोल यहाँ ''

चन्द्रसेन विराट का यह विचार है कि वर्तमान समय कितना भी मुश्किलों भरा क्यों ना हो, किन्तु आने वाला भविष्य उज्जवल ही होगा-

'' जो भविष्य में कभी भी ठोस रूपाकार लें,
सत्य के उस स्वप्न की हम कल्पना करते रहें।''

(इस सदी का आदमी)

कोई भी रचनाकार अपने युग और समय की सच्चाइयों से निरपेक्ष नहीं रह सकता, वह अपने आस-पास जो कुछ भी देखता है, उसे वह अपनी रचना के माध्यम से व्यक्त करता है-

'' समय सापेक्ष हो जो भी स्वयंभू कवि रचता,
विषय खुद सूझ जाता है, विषय माँगा नहीं जाता।''
''न मरता शत्रु ही केवल, जगत जब साथ मरता हो।

मनुज हित में प्रलय क्षण ध्वंयमय माँगा नहीं जाता।''

(इस सदी का आदमी)

गीतकार अपने लेखन के माध्यम से मनुष्य के दुख-दर्द की अभिव्यक्ति करने की इच्छा रखता है, वह अपने गीतों के माध्यम से समाज की स्थितियों को प्रकट कर उनके समाधान के भी उपाय सुझाता है, इसलिए उसने लिखा है-

'' सत्य, शिव, सुन्दर हमारी लेखनी का लक्ष्य हो।
श्रेष्ठ मूल्यों की सतत् संस्थापना करते रहें।''
युद्ध से निरपेक्ष मत को विश्व अनुमोदन मिले।
मनुज के कल्याण की प्रस्तावना करते रहें।''

वह जीवन की अंतिम साँस तक समाज की पीडा को चित्रित करना चाहता है, इसलिए वह ईश्वर से प्रार्थना करता है कि-

''दे नयी उद्भावनाएँ, प्राण उर्जस्वित रखे।
हम प्रणव हो प्रेरणा की प्रार्थना करते रहें।''

(इस सदी का आदमी)

गीतकार की हर रचना में कहीं ना कहीं मानव सेवा के भाव परिलक्षित होते हैं उसके कृतित्व में मनुष्य के प्रति संवेदना और उसकी सुख, समृद्धि की कामना निहित है। वह सर्वधर्मसमभाव स्थापित कर सामाजिक परिवर्तन करना चाहता है। गीतकार विराट समसामयिक सन्दर्भो से जुडा है अत: वह समाज के प्रधान वर्ग को सम्बोधित करते हुए कहता है कि-

''खतरा है चहुँओर कि राजा सोना मत,
जाग रहे हैं चोर कि राजा सोना मत,
उनके जीवन के शिखर है उन्नत,
श्शेष के तो सपाट हैं प्यारे।''
''यदि है तू मसीहा तुझे उठना ही पडेग़ा
तुझको पुकारता है जमाना, जमाने के लिए उठ।''

(न्याय कर मेरे समय)

प्रसिद्ध गीतकार रमानाथ अवस्थी ने उनके गीतों के बारे में लिखा है कि – ''रचनाकार अपनी मूल प्रवृत्ति में दैन्य के प्रति विद्रोही होता है, उसके विद्रोह अथवा उसके क्षोभ को अनन्तोगत्वा केवल उसकी रचनाएँ ही संभालती है। यह प्रक्रिया जितनी गहन होती है उतनी ही सहज बनती है कविता।''

इस दृष्टि से जब–जब मैंने चन्द्रसेन विराट की कविताएँ, गीत या गजल पढी तो लगा कि जैसे उनका रचनाकार कविता के गहाने एक ऐसी अनूठी शब्द–सृष्टि कर रहा है जो उसे उस बिन्दू तक ले जायेगी, जहाँ एक ऐसा गुलाब है, जो अकेला होकर भी पूरी फुलवारी से अधिक आकर्षक और हमारी पहचान के योग्य हैं मेरे लिए विराट की कविता उसी गुलाब की तरह है। मुझे विश्वास है कि यह गुलाब काव्य देवता के लिए एक आनन्दमय छन्द जैसा सिद्ध होगा।

(लडाई लम्बी है)

विवेच्य गीतकार केवल भावुक श्रृंगाार के गायक नहीं है, इसके साथ ही वे प्रगतिवादी तेवर के भी सशक्त गीतकार है। सुप्रसिद्ध कवि भवानीप्रसाद मिश्र का विचार है कि – ''चन्द्रसेन विराट ने अपने गीतों में यथार्थ को चित्रित किया है, उनमें समय का सत्य और यातना उपस्थित है।''

दिनकर, सोमवलकर के शब्दों में कहें तो चन्द्रसेन विराट गीत विद्या को समर्पित एक विशिष्ट हस्ताक्षर है, उन्होंनें गीतों, गजलों और मुक्तकों के माध्यम से प्रणय, श्रृगाार, राष्ट्रीय भावनाओं, आज के आदमी के अकेलेपन तथा घुटन को सार्थक अभिव्यक्ति दी है। उसके अर्न्तमन में जो दर्द की बाँसुरी है, वह चुप नहीं रहती–

स्वर पर चुप्पी की साँकल दे।
कितना भी शब्दों से बचना
तेरे जाने या अनजाने
तुझसे हो जायेगी रचना
तू परहेज कर,पर तेरे
भीतर जो रस का सोता है
उसे फूटना है फूटेगा
सुन विराट तू लाख कहे
पर तुझसे गीत नहीं छूटेगा।

(किरण के कशीदे – कामना से)

गीतकार का मानना है कि रचनाकार को किसी भी परिस्थिति में भयभीत नहीं होना चाहिए, चाहे किसी को उसकी बात प्रिय लगे या अप्रिय–

''बात कडवी लगे, मगर बोलनी पड रही
यदि हमीं ना कहे, कौन कह पायेगा।
औसतन आदमी तो दु:खी है यहाँ
आँकडों का भले और निष्कर्ष हो
जिन्दगी के स्तरों का पतन हो रहा
कागजों में भले खूब उत्कर्ष हो।
भूख रोटी मिटायेगी, नारे नहीं
पेट भूखा न कुछ और गर पायेगा।''

एक ओर उदाहरण देखिये–

''ये अँधेरे ये गुफाएँ अब किसे आवाज दें
कौन सुनता है अब सदाएँ अब किसे आवाज दें।
सिर्फ दीवारें सुरंगे या कुएँ कब्रें यहाँ
किस तरफ से कहा जाएँ अब किसे आवाज दे।
कंठ पर पँजा गडाये हैं परिस्थितियाँ कठिन
छटपटाती चेतनाएँ अब किसे आवाज दें।''

बीता समय भुलाकर भविष्य और नवीनता के बारे में सोचिए–

''अब तो मत प्राचीन सोचिए
नूतन और नवीन सोचिए
भूतकाल भूलें, नवयुग में
बिल्कुल अर्वाचीन सोचिए।''

विराट भले ही प्रेम की पीर के गायक है, पर एक रचानाकार के दायित्व से भी वे अनभिज्ञ नहीं है। वर्तमान को खुली आँखों से देखकर, समाज को भविष्य के प्रति सचेत करते हुए उन्होंने अपना कविकर्म निष्ठा के साथ पूर्ण किया है।

७.१ समकालीनता का अर्थ

समकालीनता : साहित्य गहन मानवीय अनुभवों से संपृक्त होकर ही आत्मीय बन सकता है। आज हमें विचारना होगाा कि समकालीनता और परम्परा का रिश्ता संघर्ष का है या एकत्व का? समाज के नियमों का ज्ञान करना, उन्हें भोगना और अनुभव करना ही समकालीनता की सामाजिक अवधारणा है।समकालीनता को केवल कालवाची प्रत्यय नहीं, वरऩ एक बोध और मूल्य के रूप में देखा जाना चाहिए। वह तत्काल मूल्यों की खोज से जुडी है। समाज के नियमों का ज्ञान करना, उन्हें भोगना और अनुभव करना ही समकालीनता की सामाजिक अवधारणा है। हमारे आस-पास जो कुछ हो रहा है, उतना ही समकालीन नहीं है अपितु हमारे बीच आज जो छीज रहा है, चाहे वे हमारे जीवन मूल्य हो या हमारी परम्पराएँ, उनकी रक्षणीयता और पुनर्सृष्टि का सवाल भी इससे जुडा है। अत: समकालीनता का तात्पर्य अपने अतीत और भविष्य से विछिन्न वर्तमान काल-खण्ड नहीं है। यह तो अतीत में निर्मित होकर भविष्य की कुक्ष में प्रविष्ट होकर, एक प्रवाह के रूप में हमारे सामने आती है। जिज्ञासु मनुष्य स्वभावत: सामाजिक-ऐतिहासिक यथार्थ को जानना चाहता है। इस कार्य में यदि समकालीन साहित्य अभिव्यक्ति की नई पद्धतियों को एवं मानवीय स्वभाव की जटिलताओं को समझने की समझ नहीं दे पाता तो हम उसकी श्शरण में क्यों जायें? समकालीनता भी सामाजिक चेतना की तरह सामाजिक मनोविज्ञान में एक बेहद कठिन और जटिल प्रत्यय है। वैज्ञानिक एवं तकनीकी सुविधाओं सें यदि आज की सभी समस्याओं का समाधान हो पाता तो संसार में न्याय का श्शासन हो जाता, किन्तु ऐसा नहीं है। इस कार्य की निष्पति मानस की गुणवत्ता से ही सम्भव है, जो आज के मानव के पास है। वास्तव में समकालीनता व्यक्तिगत जिन्दगी की और विराट समाज और इतिहास की समस्याओं से जुडी होती है और विराट के काव्य में व्यक्तिगत एवं सामाजिक जुडाव होने के कारण वह समकालीनता से ओत-प्रोत है।

गीतकार एक साथ भाव, वस्तु, और संदर्भो के अनुकूल काल के दोनों छोरों पर समानान्तर यात्रा करता है। समकालीन रचना का कार्य परम्परा के दरवाजे का ध्वस्त करना नहीं अपितु उसे खोलना है। रचनाकार नए यथार्थ की खोज केवल अपने लिए नहीं,वरन् समाज के लिए करना चाहता है। कोई भी रचना अपने आप में समकालीन नहीं होती वरन् उसे पढने पर जो घटित होता है, वह समकालीन होता है। रचना में समकालीनता का दिग्दर्शन होने पर संवेदनात्मक ताजगी का बोध होता हैं।

अंग्रेजी श्शब्द कंटेम्पोरेनिटी का हिन्दी पर्याय समकालीनता है, जिसका अर्थ किसी निश्चित कालखण्ड में जीना है। अपने युग बोध, इतिहास बोध तथा समसामयिक चेतना से जुडे रहने का द्योतक

है। समकालीनता एक मूल्य दृष्टि है, विचार दृष्टि है जिसमें अपने देश काल और इतिहासबोध से तटस्थता अपनाकर प्रेम, आध्यात्म, तथा प्रकृति की सुदंरता के शाश्वत बोध की कल्पना की जाती है। यह अपने गत्यात्मक दौर से संपृक्ति की अवधारणा है। यह अपने ऐतिहासिक संक्रमण एवं युग बोध से रूबरू होना है। कवि रघुवर सहाय समकालीनता पर टिप्पण करते हुए कहते है कि – ''समकालीनता भविष्य के प्रति पक्षधरता का दूसरा नाम है। काव्य और गीत में समकालीनता की सही पहचान के लिए हमें कवि की भाषा और उसके भावबोध के परस्पर संबंधों को जानना चाहिए।'' विश्वम्भनाथ उपाध्याय कहते है कि–'' समकालीन काव्य में काल अपने गत्यात्मक रूप में है, ठहरे हुए क्षण अथवा क्षणांश के रूप में नहीं। यह काल क्षण की कविता नहीं काल प्रवाह की, आघात और विस्फोट की कविता है। समकालीन हिन्दी गीत ने भारतीय जन जीवन को अत्यन्त सकारात्मक रूप में, इसकी कमियों को उद्घाटित करते हुए उभारा है। यह जीवन में भाग लेते हुए, समस्याओं से लडते, जुझते आम आदमी के गीत है, जो विपरीत स्थितियों में भी मानवीय मूल्यों की सुरक्षा चाहती है। इसमें निराशा के स्थान पर संघर्ष और पराजय के स्थान पर विद्रोह दिखाई देता है। ये जीवन का सही मर्म तलाशना चाहते है; इसलिए इसमें हालातों का जिक्र इस तरह नहीं होता कि हमें वह परेशानियों की फेहरिस्त लगे। समग्रता में व्यक्ति की अस्मिता की पहचान करते हुए वह सकर्मकता में विश्वास करती हुई हमारे अनुभवों के निजी संसार को वृहत्तर समाज से जोडती है। आज के सजग संवेदनशील कवि को अनुभव हो रहा है कि कठिनाइयाँ बडी हैं। ये कठिनाइयाँ ऐसे कवियों को अनुभव हो रही है– जिनकी चिन्ता एक ओर उनकी प्रतिबद्धता, विचारधारा, सामाजिक सलंग्नता व संघर्ष चेतना है, दूसरी ओर खुद कविता भी जिनकी कम जरूरी चिन्ता या सरोकार नहीं है।

७.२ चेतना का अर्थ एवं प्रकृति :

सामान्यत: सृष्टि जड एवं चेतन दो रूपों में व्याप्त है। जड रूप में किसी प्रकार की संवेदना और सजगता का अभाव है। इसके विपरित इच्छा, संवेदना और सजग क्रियाओं से समपन्न रूप को चेतन कहा जाता है। चेतनता द्वारा ही हमें सभी प्रकार के सत्– असत् तत्वों का बोध होता है।

चेतना शब्द को विद्वान आत्मवाचक मानकर चित् धातु से कर्ता अर्थ में ल्यप् प्रत्यय से चेतना शब्द बना है। इस चेतन शब्द के सामान्यत: अण्डरस्टेंडिग, सेंस, इण्टेलीजेंस, कॉन्सीयसनेस, मेण्टल परसेप्सन आदि आधुनिक भावबोध वाले शब्दों के गृहीत अर्थो का प्रयोग किया जाता है। हिन्दी में चेतना के लिए प्रज्ञा, बुद्धि, मेधा, मति, सजीवता, ज्ञानात्मक मनोवृत्ति, ओज, अवबोधन, चिन्तनशक्ति, संवेदनशीलता, मानसिक सामर्थ्य आदि शब्द दिये गये है।[१]

विष्णुकान्तश्शास्त्री का कथन है कि – जिज्ञासा, श्रवण, ग्रहण, धारणा, ऊहापोह, अर्थविज्ञान तथा तत्वबोध चेतना के सात सोपान है, जिन्हें क्रमश: तय कर हम आगे बढते है।[२]

चेतना उन सभी क्रियाओं का योग है, जो वस्तुगत यर्थाथ के बारे में आदमी की समझ और उसकी व्यक्तिगत समझ से सक्रिय रूप में यहायक होती है।

नरेन्द्र सिंह का कथन है कि चेतना का जन्म मनुष्य की सामाजिक उत्पादन प्रक्रिया में होता है और यह भाषा से अविभाज्य रूप में जुडी है।

मनोविज्ञान के अनुसार चेतना मन की वह स्थिति है, जिसमें बाह्य जगत् के प्रति संवेदनशीलता, तज्जन्य तीव्र अनुभूति तथा आवेग, इनके चयन या निर्णय की शक्ति और इन सबके प्रति वर्तमान चिन्तन रहता है।[३]

वास्तव मे चेतना मनुष्य को विवेकसम्पन्न बनाती है तथा उसे युगबोध की दृष्टि प्रदान करती है। चेतना सामाजिक घटनाओं, परिघटनाओं की प्रतिक्रिया स्वरूप मानव मस्तिष्क में उपजी वह निर्णय शक्ति है, जिससे वह सम्पूर्ण विश्व को देखता है। चेतना विवेक, बुद्धि और जागरण की भावना से युक्त होकर अविच्छिन्न रूप में प्रवाहित होती रहती है युग की अधोगति और विविध प्रतिकूल परिस्थितियों में जो विचारधारा की प्रतिभा, आकर्षण दीप्त बनकर चमक उठे, और जिसके प्रभाव से समूचे युग में नवजागरण की लहर दौड जाये, वही चेतना है।[४]

व्यक्तियों की भौतिक, मानसिक और आध्यात्मिक शक्तियों में सामंजस्य स्थापित कर , उनको संगठित कर, उनकी शक्ति को रचनात्मकता और लोकोन्मुखी बनाये वह है चेतना।

७.३ श्री चन्द्रसेन विराट के काव्य में समकालीन चिन्तन एवं चेतना :

गीतकार विराट के गीतों में व्यक्ति, समाज,परिवार, परिवेश, भाव एवं काल सब कुछ उतर आया है, जिसके साथ कवि का आत्मीय जुडाव है। जीवनानुभव की यह व्यापकता विशिप्ट जीवन विवेक की गहनता का सूचक है। कवि का वहीं अनुभव सार्थक है, जो निज से चलकर पर तक की यात्रा करता है और निज अनुभव व्यापक आयाम ग्रहण कर सामाजिक सच्चाइयों का रूप धारण कर लेता है। उनके गीतों में उपभोक्ता संस्कृति की परिणति, अर्थतंत्र के परिवर्तन, तकनीक की अतिवादिता से अकेलेपन की गुहा में मानसिक रूप से संत्रस्त मानव, टूटते परिवार, बिखरते जीवन मूल्य आदि का मर्मस्पर्शी चित्रण हुआ है।

यहाँ मात्र गीतकार का अभावग्रस्त जीवन चित्रित नहीं हुआ है अपितु उसके माध्यम से सम्पूर्ण समाज का अभाव मूर्तिमान हो उठा है। गीतकार विराट परिस्थितियों के समक्ष घुटने नहीं टेकते अपितु वह देश-काल निरपेक्ष तथा समाज के बोध से तटस्थ रहकर उतरदायित्वों से बचना नहीं चाहता। अर्थतंत्र पर आधारित व्यवस्था में व्यक्ति निष्क्रिय और निश्चेष्ट हो जाता है, किन्तु सुविधा प्राप्ति के धरातल पर अधिक सजग और सचेष्ट दिखाई पडता है। समकालीन कवि और पाटक रचना के सृजन और पठन के आद भी उससे मुक्त नहीं हो पाते, बल्कि दोनों अपने भीतर कृति की पुनर्रचना में जुट जाते है और बोध प्राप्त करने लगते है। इस संदर्भ में समकालीन कविता के मूल्य बोध की चर्चा करते हुए यदि ऐतिहासिक दृष्टि से उसके मूल्यों की मीमांसा की जाए तो प्लेटो के अनुसार सत् श्रेयस और सौन्दर्य ये तीन ही सर्वोच्च मूल्य हैं। प्रश्न यह उठता है कि क्या आज समकालीन कविता में ये मूल्य उजागर हो रहे है? इन मूल्यों की विवेचना करने पर, विचार करने से पूर्व में देखना होगा कि आज की कविता में इन मूल्यों का स्वरूप कैसा है? मूल्यों के कौन-कौन से प्रकार हैं तथा उनकी समीक्षा के मानदण्ड कौन से हैं? और वे किस रूप में अभिव्यक्त हुए हैं?

मूल्य की परिभाषा देते हुए डॉ. विमल की मान्यता है-' 'मानविकी के संदर्भ में मूल्य का अर्थ है जीवन दृष्टि या स्थापित वैचारिक इकाई, जिसे हम सक्रिय नाम भी कह सकते हैं। भौतिक जगत में मूल्य उपयोगिता से संबंधित होते है। जबकि वैचारिक जगत में अपनेपन से। मूल्य वह वैचारिक इकाई है, जिसको आधार बनाकर जीवित रहते हुए व्यक्ति आत्मोपलब्धि करता है। मूल्य मानव की चिन्तन प्रक्रिया से ही पोषित होता है। वह मानव के हाथ से ही विनष्ट भी होता है। मूल्यों को नकारने के बोध में टूटने व जुडने की प्रक्रिया साथ-साथ चलती है।''

समकालीन कविता में आत्मज्ञान की अवस्था में, आत्मविश्वास के साथ मूल्य बोध में आतंरिक एकता के महत्तव की ओर इंगित किया जा रहा है। मानव जो जिन्दगी भोग रहा है उसको रूपायित करने के साथ ही कविता में ऐसे मूल्यों व प्रवृतियों का विवरण हैं, जिससे जीवन की सार्थकता की तलाश का बोध हो। मूल्यों की चर्चा करते समय मानव के अन्तर्तम को पहचानना होगा। अन्तर्तम में निहित मूल्यों के संश्लिष्ट रूप को कविता में चित्रित किया गया है। साहित्य गहन मानवीय अनुभवों से संपृक्त होकर ही आत्मीय बन सकता है। आज हमें विचारना होगाा कि समकालीनता और परम्परा का रिश्ता संघर्ष का है या एकत्व का? समाज के नियमों का ज्ञान करना, उन्हें भोगना और अनुभव करना ही समकालीनता की सामाजिक अवधारणा है। समकालीनता को केवल कालवाची प्रत्यय नहीं, वरऩ एक बोध और मूल्य

के रूप में देखा जाना चाहिए। वह तत्काल मूल्यों की खोज से जुडी है। समाज के नियमों का ज्ञान करना, उन्हें भोगना और अनुभव करना ही समकालीनता की सामाजिक अवधारणा है। हमारे आस-पास जो कुछ हो रहा है, उतना ही समकालीन नहीं है अपितु हमारे बीच आज जो छीज रहा है, चाहे वे हमारे जीवन मूल्य हो या हमारी परम्पराएँ, उनकी रक्षणीयता और पुर्नसृष्टि का सवाल भी इससे जुडा है। अत: समकालीनता का तात्पर्य अपने अतीत और भविष्य से विछिन्न वर्तमान काल-खण्ड नहीं है। यह तो अतीत में निर्मित होकर भविष्य की कुक्ष में प्रविष्ट होकर, एक प्रवाह के रूप में हमारे सामने आती है। जिज्ञासु मनुष्य स्वभावत: सामाजिक-ऐतिहासिक यथार्थ को जानना चाहता है। इस कार्य में यदि समकालीन साहित्य अभिव्यक्ति की नई पद्धतियों को एवं मानवीय स्वभाव की जटिलताओं को समझने की समझ नहीं दे पाता तो हम उसकी शरण में क्यों जायें? समकालीनता भी सामाजिक चेतना की तरह सामाजिक मनोविज्ञान में एक बेहद कठिन और जटिल प्रत्यय है। वैज्ञानिक एवं तकनीकी सुविधाओं सें यदि आज की सभी समस्याओं का समाधान हो पाता तो संसार में न्याय का शासन हो जाता, किन्तु ऐसा नहीं है। इस कार्य की निष्पति मानस की गुणवत्ता से ही सम्भव है, जो आज के मानव के पास है।

समकालीन हिन्दी गीत में प्रमुख प्रवृत्ति है- कविता की लोकोन्मुखता। सन् साठ के बाद कविता जिस तरह से आम आदमी का दस्तावेज बनकर उभरी है, उससे यह बात स्पष्ट हो गई है कि कविता , सिर्फ कवि की कल्पनात्मक अभिव्यक्ति नहीं, अपितु लोक जीवन का चलचित्र है, जिसमें वह सब कुछ है जो हमारे आस पास घटित हो रहा है।। कवियो ने अपनी सूक्ष्म दृष्टि से लोक जीवन की समग्र गतिविधियों को बडी बारीकी से अपनी कविताओं में उकेरा है। लोककलयाण के लिए समाज के सजग प्रहरी की भूमिका का निर्वहन करते हुए सामाजिक, राजनीतिक, विद्रूपताओं, विषमताओं , कुरीतियों आदि पर कुठाराघात करके सुव्यवस्थित समाज की परिकल्पना की है।समकालीन हिन्दी गीत में लोकमानस मे संचित व्यवहारिक और प्रामाणिक जीवनानुभूतियों का सत्य अभिव्यक्त हुआ है, जिसमें लोक चेतना को जागृत एवं संस्कारिता करता जीवन्त प्रवाह है।

७.४ उपसंहार :

समकालीनता हमें आदर्शो के कोटर से निकालकर समाज एवं समय के यथार्थ से परिचित कराती है। सुधी पाठक जब नीतिमूल्यों के परम्परागत मापदण्ड त्यागकर, मुलम्मा चढी भाषा को त्यागकर समकालीन काव्य के भाव, भाषा, दृष्टि से सम्बन्धित अनेक उपलब्धियों से परिचित हो सकेंगें और खुरदरी मिट्टी के भविष्य की खुरदरी लेकिन यथार्थ भूमि पर बेहिचक कदम रख सकेंगें।

❑❑❑

• अध्याय - ८ •

श्री चन्द्रसेन विराट का गीत विधा को प्रदेय

८.१ आधुनिक काल में साहित्यकार की भूमिका :

विद्रोह साहित्य का मूल स्वभाव नहीं है। मूल स्वभाव है संस्कृत अथवा परिष्कृति की भावना का प्रसार करना, मनुष्य को सुसंस्कृत बनाना, हीनता, द्वेष, निराशा आदि जैसे नकारात्मक पक्षों की उपेक्षा करके वह जीवन विकास, एकता, समानता, सद्भावना आदि सकारात्मक पक्षों की स्थापना करता है। नकारात्मक पक्ष का उपयोग भी साहित्य करता है, किन्तु उसके स्वीकार के लिए नहीं, बल्कि उससे सम्भावित हानिकर या विनाशकारी कर्मो के कुपरिणामों को दिखाकर उनकी त्याज्यता सिद्ध करने के लिए। हमारा समकालीन साहित्य क्या हमें बैचेन या उद्धेलित करता है? हमारे देश की परिस्थितियों ने हमारे साहित्य को ही बैचेन और उद्धेलित कर दिया है पिछले पन्द्रह-बीस वर्षो में दुनिया इतनी बदल गई है कि साहित्य को स्वयं का अस्तित्व बनाये रखने के लिए अपने स्वरूप में कुछ क्रांतिकारी बदलाव लाने पर सोचना पड रहा है। सिनेमा, टीवी, इंटरनेट और मोबाइल ने वातावरण में ऐसा परिवर्तन कर दिया है कि लगता है साहित्य के विरुद्ध कोई साजिश रची गई है. यह तकनीकी क्रान्ति सुनामी की तरह आई उसकी तीव्रता को रोकना कठिन जरूर है, पर असम्भव नहीं. हमें साहित्य में इस भयावह स्थिति को समझना होगा। समकालीन साहित्यकार को चेतना होगा, पूर्ण अनुभूतिशीलता और संलग्नता से अपने लेखकीय कर्म का निर्वाह करना होगा। उसे समाज से किसी प्रकार की अपेक्षा किये बिना अपने कर्म को सततता और सजगता से करना होगा।

जिस तरह से आज गीत आम आदमी का दस्तावेज बनकर उभरा है, उससे स्पष्ट है कि गीत सिर्फ कवि की कल्पनात्मक आत्मिक अभिव्यक्ति ही नहीं अपितु लोक जीवन का चलचित्र है, जिसमें वह सब कुछ है जो हमारे आस-पास घटित हो रहा है।

गीत की जीवन्तता इस बात पर निर्भर करती है कि वह कितना डुबोता है और कितना आस-पास का दर्शन कराता है। इस गीत के साथ चलते हुए हम वर्तमान को देख सकते हैं और पा सकते हैं उस परिदृश्य को जिसमें जीते-मरते, लडते-झगडते, बौखलाते-बिसूरते, तडपते-कसकते, और हर ठोकर पर एक जोडी दर्द को गाँठ बाँधते, किन्तु फिर भी जीते आदमी की ''एक्सरे-प्लेट्स'' है।

समकालीन गीत वह है जिसमें बनावट कम है और बुनावट अधिक। इसमें पूर्णत: कल्पित, आरोपित और अद्वितीय की तलाश नहीं की गई है, वरन् जो सामने घटित हो रहा है, उसे ही रचनात्मक स्तर पर खुलासा करके कहा गया है। पिछले कुछ वर्षो से आदमी कितना टूट कर बिखरा है, कितना बेबस और लाचार होकर जीता रहा है, कितने टुकडों में बँटा है वो यह सब श्री विराट के गीत के बही खातों के पन्नों में पढा जा सकता है।

उनके पिछले दो दशक के गीतों में देश में घटित होने वाली वारदातों के फलस्वरूप असफलताओं का विक्षोभ और आक्रोश अभिव्यक्त हुआ है। उनके गीत मानवीय जीवन संघर्ष का प्रतिबिम्ब है। डॉ. उपाध्याय का मत है-'' समकालीन कविता अपने समय के मुख्य अन्तर्विरोधों और द्वन्दों की कविता है, समकालीन कविता में जो हो रहा है का स्पष्ट खुलासा है। इसे पढकर वर्तमान काल का बोध हो सकता है, क्योंकि उसमें जीते, संघर्ष करते, लडते, बौखलाते, तडपते, गरजते तथा ठोकर खाकर सोचते वास्तविक आदमी का परिदृश्य हैं---------- जीवन और मूल्यों की अमूर्त धारणाओं के स्थान पर सताये हुए लोगों का विरेचन और विद्रोह है, द्रोह हैं।'' मूल्य मानव के विकास, उत्थान, परिवर्तन और प्रगति के द्योतक है। जीवन में कुछ मूल्य चिरन्तन होते हैं और कुछ मूल्य परिवर्तनशील होते है। चिरन्तन मूल्यों में देश, काल, समय के अनुसार कोई परिवर्तन नहीं होता, वे शाश्वत होते हैं। प्रश्न यह है कि क्या कविता में शाश्वत मूल्यों का समावेश है?

मानवीय द्वन्द को उजागर करने में उनके गीत किस प्रकार गतिशील है, यह उनके गीतों के विश्लेषण से स्पष्ट है।

वास्तव में समकालीनता व्यक्तिगत जिन्दगी की और विराट समाज और इतिहास की समस्याओं से जुडी होती है और विराट के काव्य में व्यक्तिगत एवं सामाजिक जुडाव होने के कारण वह समकालीनता से ओत-प्रोत है।

गीतकार एक साथ भाव, वस्तु, और संदर्भो के अनुकूल काल के दोनों छोरों पर समानान्तर यात्रा करता है। समकालीन रचना का कार्य परम्परा के दरवाजे का ध्वस्त करना नहीं अपितु उसे खोलना है। रचनाकार नए यथार्थ की खोज केवल अपने लिए नहीं,वरन् समाज के लिए करना चाहता है।

कोई भी रचना अपने आप में समकालीन नहीं होती वरन् उसे पढने पर जो घटित होता है, वह समकालीन होता है। रचना में समकालीनता का दिग्दर्शन होने पर संवेदनात्मक ताजगी का बोध होता हैं।

सामयिक प्रश्नों से मुठभेड, साहित्यिक अभिव्यक्ति का अहम् हिस्सा रहा है। गीतकार अपने समय के यथार्थ को खगांलकर सामयिक समस्याओं से भिडता है। आज वैश्वीकरण ने जहाँ विश्व को जोडा है, वही मानव-मानव के बीच दूरियां भी खडी कर दी है। बाजारवाद और उपभोगवाद ने मनुष्य को संवेदनाशून्य बना दिया है। संवेदना की जगह आत्मकेन्द्रित मानसिकता बढ़ गई है। समाज के इन्हीं सवालों का विश्लेषण श्री विराट के गीतों में हुआ है। जहाँ श्री विराट का काव्य -सृजन सन्दर्भो में इस अपेक्षा की दूर-दूर तक पूर्ति करता है। वहीं उसमें अभिजात्यवादी और स्वच्छन्दतावादी तत्वों का उचित समन्वय है। काव्य के अनिवार्य तत्व रस और छनद का उसमें वैसा अविचारित परित्याग नहीं मिलता जैसा कि नयी कविता - अकविता के कवियों द्वारा किया गया है, न कि रीतिकालीन कवियों जैसा रूढिबद्ध परम्परा का मोह दिखाई देता है। वैचारिक नवीनता और सार्थक युगीन चिन्तन का सार लिए हुए समीक्ष्य काव्य की संवेदना एवं शिल्प नवीन प्राचीन की युगाानुरूप स्पृहणीय प्रस्तुति है। अतएव स्वागत के योग्य है। कवि ने प्रचलित रूढियों और भ्रामक स्थापनाओं के विरूद्ध तथ्यपरक और तर्कसम्मत सैद्धान्तिक एवं व्यवहारिक दृष्टि देकर हिन्दी गीत एवं गजल के स्वतन्त्र विकास का मार्ग निर्मित किया है।

समकालीन साहित्यकार में या तो दिशाहीनता है या विदेशी अनुकृति अथवा यौन विकृतियों का चित्रण। यही दशा अभिव्यक्ति के माध्यम या शैली की भी है। उसमें या तो निजीपन है कि वह पूर्णतया एकान्तिक है, या इतनी अस्पष्टता है कि कभी-कभी ऐसा लगता है कि यह भी ज्ञात नहीं होता कि वह क्या कहना चाहता है, अथवा किसी नये शैली-शिल्प के निर्माण की इतनी ललक है कि जिस से उसी के कारण साहित्य जगत में वैशिष्ट्य प्राप्त करने का असफल प्रयतन करता है. ये स्थितियाँ वर्तमान युग के सन्दर्भ में वस्तुत: चिन्तनीय है.

आज का युग सामान्य जन की दृष्टि से निराशा का युग हो गया है, अनास्था का युग हो गया है और अन्तर्द्वन्द (क्या करें या क्या ना करें की मानसिक स्थिति) का युग हो गया है, जिस की अभिव्यक्ति आज का साहित्यकार कर भी रहा है। किन्तु इतना ही पर्याप्त नहीं है. उसे तो समाज में एक क्रांति लानी है. जन-जन के हृदय में तीव्र उद्वेलन उत्पन्न करना है. वह अपनी भूमिका का निर्वाह तभी कर सकता है, जब वह आज के युग को आशा, आस्था और कर्मण्यता का युग बना दे। अपने तीव्र आघातों से कुहासे को छाँटकर ऐसी ज्योति विकीर्ण करे, जिसके प्रकाश में समाज अपना नव्य रूप निर्माण करने में समर्थ हो सके।

सवाल उठता है कि घनघोर स्वार्थ, लिप्सा, छल और आचरण भ्रष्ट शब्दों के तुमुल कोलाहल के इस समय में संयम, शील, सौहार्द, समानता, संस्कारशीलता तथा मुक्ति का मार्ग दिखाने वाले साहित्यिक शब्द क्या अब कहीं सुने और पढे जायेंगें या साहित्य और उसके रचयिता को निर्वासन का दुख भोगना होगा?

८.२ चन्द्रसेन विराट की देन :

विराट जी एक श्रेष्ठ गीतकार है, इससे भी कहीं अधिक एक अच्छे, सहज, सरल और संवेदनशील इन्सान हैं। एक नौकरीपेशा होते हुए भी सामाजिक परिस्थितियों को अनुभव करते हुए उनकी गीतयात्रा जारी है। उनकी सम्पूर्ण ग्रन्थों का अध्ययन करने के बाद यह निष्कर्ष निकलता है कि छायावादोत्तर हिन्दी गीतिकाव्य यात्रा के विकास में महतवपूर्ण भूमिका होने के बावजूद उन्हें आलोचकों ने वह स्थान नहीं दिया,जो उन्हें मिलना चाहिए। किन्तु वे इससे निराश नहीं थे वे लिखते है कि लिखना मेरी सात्विक विवशता है। मैं अपना काम कर रहा हूँ और रचना को अपना काम करने के लिए स्वतन्त्र मानता हूँ। कोई भी सक्षम रचना विपरीत परिस्थितियों में भी करवाने में सक्षम होती है। मेरे अच्छे समीक्षक तो मेरे पाठक हैं। मंच पर जब मैं रचनायें पढता हूँ, तो पाठकों की प्रशंसा ही मेरा पुरस्कार है। पाठको की चिंता करने वाले विराट जी ने केवल सौन्दर्य या श्रृंगार पर ही नहीं लिखा है। यह बात और है कि उनके समग्र लेखन में लगभग ८० प्रतिशत श्रृंगार पर ही जोर दिया गया है। किन्तु वे अपने समय बोध ओर समकालीन संदर्भो से गहराई से जुडे हैं। वे अपनी स्पष्टवादिता के लिए जाने जाते हैं। उनके शब्दों में –'' हम अनुभव करते हैं कि देश वहीं का वहीं खडा है। गरीब और गरीब हुए हैं तो अमीरों की इमारतें ऊँची उठ रहीं हैं। उदाहरण:–

पाँच दशकों में भी पिछडा
तो यह किसकी लाचारी हैं।
पूछ रहा है देश बताओ
यह किसकी जिम्मेदारी है।''

साहित्य और कलाओं के सरलीकरण और उसके रागदरबारी आलाप को लेकर भी कवि ने गीतों में नेताओं की खबर ली हैं– कला, ज्ञान, विज्ञान क्षेत्र को भी बाजार बना डाला। दैनिक वेतन पर कोयल का गायन अब सरकारी है।'' हिन्दी की दुर्दशा को लेकर भी यह रचनाकार कम व्यथित नहीं हैं–

''हिन्दी अब भी उपेक्षिता है, अंग्रेजी पटरानी है।
करूण कहानी रही देश की, अब भी करूण की कहानी है।''
यही दुर्दशा देश में आज प्रतिभा की हत्यारी है।

विराट जी मानते हैं कि कथ्य रागात्मक हो या समकालीन, वे स्वयं को जन–जन का गीतकार और उनका पक्षधर बताते है। उन्होंनें लिखा भी है कि– जिनका कहीं न कोई, हम पक्षधर उन्हीं के। जो बेजुबान बेबस, उन्हीं की जुबान हम है।'' छायावादोत्तर हिन्दी गीतिकाव्य यात्रा के विकास में महतवपूर्ण भूमिका निभाने वाले श्री विराट जी को विस्मृत नहीं किया जा सकता। वे जितने लोकप्रिय मंचों पर रहे, उतने ही चर्चित प्रकाशन के स्तर पर भी। दो दर्जन से अधिक गीति रचनाओं की पुस्तकों के गीतकार विराट जी का अपना महत्व है। उनके गीतों की तासीर भी यही है कि कोई अपने आग्रहों,दुराग्रहों या पूर्वाग्रहों से मुक्त होकर अकेले में उनके गीतों को गुनगुनाए तो वे पूरा सुकून देते है। किसी भी अच्छी रचना की इससे बढकर और कोई कसौटी नहीं हो सकती।

यह बात और है कि रचना की दुनिया का यह चलन रहा है कि रचनाकार के इस संसार से जाने के बाद ही उसके कृतित्व का मुल्याकंन किया जाता है। **विराट जी के साथ भी स्थितियों को विविधता से अभिव्यक्त करते हैं।** सामयिकता के साथ ही उनके गीतों में ऐसे तत्व भी विद्यमान है, जो उन्हें शाश्वत और स्थायी बनाते हैं। उनकी सूक्ष्म दृष्टि से उनकी लेखनी से नए –नए चित्र बन पडे हैं, जो मौलिक होने के साथ ही नवीन दृष्टिकोण भी प्रदान करते हैं। उनका गीतिकाव्य गहन अनुभूतियों और उच्च कल्पनाओं का स्पष्ट प्रतिबिम्ब उपस्थित करती है।

वे पारम्परिक रसधारा से अपने को कभी पृथक नहीं कर सके, रसात्मक प्रवृतियों से कभी उच्छिन्न होकर नहीं चले। उनके पास व्यापक स्पष्ट कोमल कल्पना है। गीतों में जीवन का प्रवाह है। वे जीवन से अलग भोगना नहीं चाहते। उन्हें जीवन के विशुद्ध चित्रों को अंकित करने में आनन्द मिलता है। वे नए मूल्यों के साथ आगे बढते हैं, पर वे पुराने मूल्यों को भी छोडना नहीं चाहते। विराट ने स्वयं स्वीकार किया है– ''अस्वस्थ एवं जड परम्पराओं से जुडे रहना प्रगति के लिए सर्वथा बाधक है, इसलिए परम्पराओं का जीवन के हित में तोड देना कोई गुनाह नहीं मानता हूँ मैं। यह हुआ तो इससे गीत में नई भावचेतना का उदय हुआ है– उसके तेवर में निखार आया है। जहाँ भी जीवन के संघर्ष ने मौत की हथकडियाँ तोडी है, मैंने जीवन को जिन्दाबाद कहा है। परम्परा तोडने के जोश में अपनी मूलभूमि से उखड जाना गँवारा नहीं। कल्पनाओं का वायवी आकाश लुभाता तो है, किन्तु खडे रह सकने के लिए यथार्थ की भूमि भी तो चाहिए,

मेरे गीतों ने आकाश में उडानें तो भरी है, किन्तु सूरदास के पंछी सा मन पुन: पुन: जहाज पर ही लौट आया है।'' किन्तु इसी बात पर पुर्नविचार करते हुए विराट ने माना कि '' गीत का क्षेत्र बहुत व्यापक है। जीवन का कैनवास भी बहुत विशाल है। अत: सभी कुछ मेरे गीतों का विषय हो सकता है और हुआ भी है। केवल कल्पना एवं यथार्थ का विवाद उठता ही नहीं। जीवन का गीत गाते समय जो कुछ उमड-घुमड कर उठे, वही गीत मैं बुन देता हूँ।''

विराट के साथ यही होता है कि कोई एक अनुभूति उनकी संवेदना के साथ रम कर अवचेतन में उतर जाती है। प्रसन्नता के क्षणों में यह पक कर अभिव्यक्ति के लिए उनसे शशब्द माँगती है। विराट की स्वरवती साँस उसे अभिव्यक्ति देती है। भीतर का वह भाव जब कंठ पर दस्तक देता है, तो वे सरगम के द्वार खोल देते हैं-

''कुछ कथ्य हृदय में व्याकुल भटक रहा।
हो सके इसे अभिव्यंजन का वर दो।''

विराट की मान्यता है कि समर्थ गीतकार नवीनतम भावबोध, मनुष्य की संकटग्रस्त स्थितियों से प्रसूत तनाव एवं संस्कृति की टूटन को गीत के माध्यम से सही संदर्भो में व्यक्त कर सकता है।

विराट के शशब्दों में - ''गीत विधा न पहले पुरानी थी, न आज हुई है। समय की धडकनों को सुनते हुए लिखा जाने वाला हर समय गीत नया ही रहा है, जिसने समय को नहीं समझा उसे समय ने भी निदर्यतापूर्वक नकार दिया है। गीत समय सापेक्ष तो है ही, कालातीत भी है, क्योंकि उसमें मानव मन के शशाश्वत अनुभवों का अनुगायन व्यक्त हुआ है। इसलिए मैं गीत विधा को आज के परिप्रेक्ष्य में असंगत एवं पिछडी हुई नहीं मानता। औद्योगिकता के इस युग में जीते हुए भी मानव में रागात्मकता है और इसलिए गीत उसे आज भी सही सन्दर्भो में व्यक्त करता है। मेरे गीत मनुष्य के स्वाभाविक सुख-दु:ख, मिलन-विरह एवं जीवन की सम्पूर्ण अनुभूतियों को व्यक्त कर सके, यही कामना रही है। मानव एवं उसकी अनुभूतियाँ मेरे गीतों का अन्तिम विषय रहे हैं।''

जब नई कविता के रचनाकारों ने गीत की मृत्यु की घोषणा कर दी तो विराट ने लिखा है कि-

''मथाई हो रही दधि की, अभी नवनीत बाकी है।
मरण की घोषणा कर दी, अभी तो गीत बाकी है।''

नई कविता के शिविर प्रर्वतकों द्वारा रचित काव्य की दुरूहता, अबोधता, अस्पष्टता एवं अज्ञेयता ने विराट जी को कभी आकर्षित नहीं किया, अपितु इस प्रकार के अबोध या बोध के विरुद्व अपनी आवाज

बुलन्द की। प्रत्येक कलम के धनी लेखक के व्यक्तित्व का तकाजा यही है कि वह सत्य को पहचाने और उसी को सही अभिव्यक्ति प्रदान करे। विराट जी ने न तो कभी अनचाहे समझौते किये और न ही अपनी अस्मिता को त्यागा। भले ही उन्हें कदम-कदम पर कितने ही विरोधों और विपरीत स्थितियों को सहना पडा।

इस परिवेशीय लडाई में कवि कभी स्वयं से जूझता है, कभी सीधे समस्याओं से, कभी क्षार बनका सन्नाटे का छंद बुनता है,कभी खुद को ताउम्र एक भीतरी आग मे सुलगने को छोड देता है।- यह बेपरवाही उसे तभी मिलती है।जब वह सीधे जनता से संवाद कर रहा होता है।, इंद्रियों को सजग रखता है।दूसरों के दु:ख-सुख देखने व सुनने के लिए और यह जो कुछ भी जोखिम वह कविता में उठाता है।वह मात्र अपनी संवेदना के बल पर।

निष्कर्षत: विराट का हिन्दी गीति काव्य के प्रति जो सबसे बडा योगदान है वह यह है कि अपनी रचनाधर्मिता को ऐसी स्तरीय गंभीरता और गरिमा के साथ लिया है कि हिन्दी गीत कविता की गरिमा को किंचित भी आघात नहीं पहुँचा। गीत की साहित्यिक एवं कलात्मक गरिमा को भी अक्षुण्ण रखा और उसके रूप शिल्प में नए-नए सार्थक प्रयोग भी कर रहे हैं। आज की समकालीन नागरिक जीवन की विविध समविषम स्थितियाँ लक्ष्य और सौन्दर्य को पूरी तरह युग सापेक्ष रीति से अपने गीतों में अभिव्यक्त कर रहे है। गीत के प्रति समर्पित चन्द्रसेन विराट जैसे गीतकारों के कारण ही आज जीवंत हैं, निराश्रित भी नहीं हो पाया है। उनके काव्य में भाव की कार्यवाही, खुद के प्रति निकटता, इंसनियत के प्रति निकटता और प्रकृति की रहस्यमयी अभिव्यक्ति का समावेश है।

अपने सृजन कर्म की सार्थकता विराट जी ने कठोर श्रम के बल पर स्थापित की है। जीवन मूल्यों को अपनी रचनाओं में समाविष्ट करके सम्मानित रचनाकारों में अनूठी पहचान बनाई है। कुल पच्चास गीत, गजल और मुक्तक संग्रह के रचयिता, माखनलाल चतुर्वेदी, सुभद्राकुमारी चौहान, वागीश्वरी तथा अन्य कई सम्मानित पुरस्कारों से सम्मानित श्री विराट के इस प्रदीर्घ सम्पन्न काव्ययात्रा के सब आयामों, साहित्यिक उपलब्धियों और उनके साहित्यिक योगदान को इस लघु श्शोध प्रकल्प में समेट पाना दुष्कर ही नहीं असंभव भी है।

❑❑❑

श्री चन्द्रसेन विराट के साथ लिए गए साक्षात्कार के कुछ अंश

प्रश्नोत्तरी

(१) छात्रावस्था में आपका प्रिय विषय कौनसा था?क्या काव्य में विशेष रुचि थी?

उत्तर : विज्ञान और गणित का छात्र रहा, तथापि मिडिल स्टेडर्ण्ड से ही हिन्दी भाषा में रूचि रही। मैट्रिक तक आते- आते कई तुकबन्दियाँ करके कापियों में लिख रखी थी किन्तु उन्हें छिपाता रहा।

(२) आपके कार्यक्षेत्र का अनुभव और उसका परिवेश आपके लेखन में कहाँ तक सहायक हुआ?

उत्तर : पिता की लम्बी बीमारी, आर्थिक तंगी, सर्विस में पात्र होते हुए भी उपेक्षा और कडवे अनुभव, सुबह से रात तक की व्यस्तता के कारण लिखने-पढने का समय न मिलने पर भी कार्यक्षेत्र के दौरों पर जाने वाली यात्राओं और देर रात तक लिखने पढने की आदत हो गई थी। इसी निरन्तरता ने आज मुझे ये मुकाम दिया। सेवाकाल की खट्टी - मीठी अनुभूतियों के दंशों एवं अनुभवों ने मुझे व्यंग्य एवं व्यवस्था के विरोध की श्शक्ति एवं अभिव्यक्ति प्रदान की।

(३) आपके नाम के साथ विराट जुडने के पीछे कोई कहानी है या भावनात्मक लगाव है?

उत्तर : कविताएँ लिखने के प्रारम्भिक दौर में, मैं वीर रस की कुछ लम्बी कविताएँ लिखता था और ऊँची आवाज में जोश-खरोश के साथ पढता था। यह गीतो की रचना एवं मधुर कंठ से प्रस्तुत करने का प्रयत्न करता था। वीर रस की जोशीली रचनाओं की प्रस्तुति के बाद मित्रगण मुझ स्थूलकाय की 'तुम्हारा सब कुछ विराट है भई, क्या शरीर, क्या कविताएँ और क्या पढना। सब कुछ के साथ तुम विराट ही हो ।'

मजाक में कही जाने वाली इस टिप्पणी के साथ विराट नाम धीरे-धीरे मेरे नाम के साथ कब जुड गया (शायद १९५५ से १९५९) कुछ ठीक से मुझे भी याद नहीं है। विराट उपनाम मेरे नाम के साथ जुडा एवं प्रकाशित/प्रसारित एवं थोडा बहुत प्रचारित हो जाने के बाद इसे छोडा जाना संभव ही नहीं रहा और यह उपनाम मुझे काम से वामन एवं नाम से विराट होने का बोध कराता रहता है। शायद इसी बोध ने मुझसे स्वयं पर यह व्यंग्य भी करवाया है कि- 'तुम थे विराट लेकिन वामन निकल गये।' १९६० में डॉ. हरिवंशराय बच्चन से भेंट करके आशीर्वाद लिया था। जब भी उन्होंने कहा था कि 'अच्छे भले गीतकार

हो, कोमल मधुर गीत लिखते हो, यह क्या अपना नाम विराट रख लिया? कितना परुष, कठोर एवं ध्वनि की दृष्टि से गीतकार के लिए अनुपयुक्त नाम रख दिया तुमने। मुझ पर घडों ठण्डा पानी पड गया। सयंत होकर उत्तर दिया–'डॉक्टर साहब मुझे मेरा कवि नाम चुनने का अवसर ही कहाँ मिला? यह तो प्रारम्भिक अवस्था में मेरे मित्रों द्वारा मजाक में दिया गया नाम है जो मेरे साथ चिपक गया है। अगर मुझे मौका मिलता तो अपने लिए कोई मधुर सा, कोमल सा नाम नहीं चुनता? तब तो फिर इसी नाम को अपने कवित्व से सार्थक करो। डॉ. बच्चन बोले– मैने आँखें मूँदकर इसे उनके आशीर्वाद के रूप में ग्रहण किया और चुप हो गया।

(४) आपने गीत/गजल/मुक्तक जैसी विधाओं में लिखा है। आपको सर्वाधिक कौनसी विधा कहने में अच्छी लगती है और क्यों?

उत्तर : जैसे माँ को अपनी हर सन्तान अच्छी लगती है ठीक वैसे ही मुझे अपनी तीनों काव्य विधाएँ प्यारी है। तथापि गीत ही वह विधा है, जिसमें मेरा मन सर्वाधिक रमता है। वैसे तो सूझा हुआ विषय अपने अनुकूल छन्द एवं विधा लेकर ही अवतरित होता है। किन्तु सर्वाधिक प्रिय विधा मेरे लिए निर्विवाद रूप से गीत ही रही है। गीत रचना में जो मुझे आनन्द मिला है,वह सर्वथा अनूठा और विशिष्ट है। गीत ने ही मुझे सर्वाधिक बाँधा और लिखवाया है।और तो और अपनी रचना प्रक्रिया को भी मैने गद्य में न लिखकर गीत में ही लिखा है।

(४) सामाजिक विद्रूपताओं पर टिप्पणी करते हुए आपकी श्शासकीय सेवा क्या कभी आडे आया? श्शासकीय सेवारत रहते हुए लेखन में मुश्किलों का सामना करना पडता है?

उत्तर : कवि हूँ तो सामाजिक विद्रूपताओं पर चोट किये बिना कैसे रह सकता हूँ? वह क्या अब और क्या तब? जब स्वयं को नहीं रोक पाया तो बहुत सोचकर वह हथियार चुना और उसके साथ वह दुशाला भी चुना कि जिसकी चोट बाहर तो दिखेगी नहीं पर अन्दरूनी मार अवश्य करेगी। सच पूछिये तो एक कवि का काव्य कौशल भी यही माँग करता है। वह एक राजनायक की भाँति नारे नहीं लगायेगा। अपनी बात को मारक बनाने के लिए वह नारों से इतर शब्दशक्ति का ऐसा प्रयोग करेगा कि सुनने वाला या पढने वाला एक बार सोचने को विवश हो जायेगा।

शासकीय सेवारत रहते हुए यह व्यंग्य ही था जिसकी सहायता से अपना मंतव्य प्रकट किया और वहाँ तक उस व्यंग्य को पहुँचाया जहाँ उसका पहुँचना लाजिमी था। प्रकारान्तर से कवि संभव चातुरता और कुशलता का प्रयोग करके अपनी बात बिना किसी का नाम लिये पूरी ताकत से कही और प्रभाव पैदा किया।

संबधित तो समझा ही, अन्य लोग भी समझ गये कि व्यंग्य किस पर और किस बात को लेकर किया गया है। मैंने अपने कवि कुल पर व्यंग्य किया है–

''साहित्य और संस्कृति को हमने ही
ऊँचा गरिमामय हाट बाजार दिया।
सामान्य कुलवधु का घुँघट हमने
मंचो पर अपने हाथ उधार दिया।''

व्यंग्य की धार काटे तो पर रोने ना दे इसी पद्धति का पालन करते हुए ४० वर्षो की शासकीय सेवा में कवि कर्म कभी मेरे आडे नहीं आया।

(५) साहित्य सृजन की प्रेरणा कब और कैसे मिली ?

उत्तर : मेरी माँ वेणुताई डोके भगवत पूजा करते हुए मधुर स्वरों में भजन गाती रहती थी। उन्हें सुनकर ही मेरे बालमन पर उनकी तरह गाने का संस्कार पड गया। फलत: आगे चलकर तुकबन्दियाँ करने एवं उन्हें सुरीले कंठ से गाकर सुनाने की प्रेरणा दी। कुमारावस्था में इन्दौर में सुने राम दंगल जिसमें आमने–सामने बैठकर कवियों की मण्डली कविताएँ पढती थी, ने भी खूब प्रेरित किया और स्वयं की रचनाएँ लिखवाई।

(६) आप काव्य को किस अर्थ में ग्रहण करते हैं?(कला के लिए कला या समाज के लिए कला)

उत्तर : मेरा स्पष्ट मत है कि कला अंतत: समाज के लिए ही है और इसी में उसकी सार्थकता भी है।

(७) कवि और कविता दोनो पर आजकल कुछ लोग व्यंग्य करते हैं आप इसका क्या कारण मानते हैं?

उत्तर : कवि होने एवं कविता लेखन तथा उसकी अशांलीन प्रस्तुति अथवा दिखावा मात्र उसे हास्यास्पद बना देता हैं और वह व्यंग्य का कारण बनता भी है। तथापि अभावुक एवं सतही समझ के लोग कवि एवं कविता को गंभीरता से नहीं लेते,और व्यंग्य करने लगते है, जो उनकी अपरिपक्व, अंगंभीर एवं ओछी मनोवृति का परिचायक हैं।

(८) आपने कभी गद्य लेखन क्यो नहीं किया?

उत्तर : हर रचनाकार की अपनी प्रतिभा एवं उसकी अनुकूल चयनित विधा में वह सृजन करता है। मेरी नैसर्गिक रुचि के अनुसार मुझे कविता करने में ही सन्तुष्टि मिलती है।

(९) आपकी अपनी वो रचना जिसे आप सर्वाधिक स्नेह देते हो?

उत्तर : वैसे तो अपनी विविध रचनाओं में से किसी एक को चुनना कटिन कार्य है, तथापि गर यह कठोर कार्य करना पडे तो मैं एक गीत चुनूँगा – ''गंगाजल अपमानित होता है। प्रारम्भिक दिनों में इसी गीत ने मुझे गीतकार की छवि प्रदान की और गीतकारों की महफिल में बैठने का अधिकार भी दिया।पाँच प्रतीकों यथा– आँसू, बादल, काजल, दीपक एवं ताजमहल को लेकर लिखा, यह गीत मेरी पहचान बन गया। उस गीत का एक छन्द यहाँ उद्धृत किया गया है–

''यदि आँसू को तुम पानी कहते हो
तो गंगाजल अपमानित होता है।
हर दीपक ही वंशज है सूरज का
उसके प्रकाश का भी तो वारिस है।
संध्या उसके ही कारण सधवा है
उससे खण्डित तम की हर साजिश है
यदि असमय ही तुम दीप बुझाते हो
ते उद्याचल अपमानित होता है।''

(१०) आज के गिरते सामाजिक/राजनैतिक/नैतिक स्तर में साहित्यिक वातावरण को आप कितना दोषी मानते है?

उत्तर : सामाजिक/राजनैतिक/नैतिक पतन के लिए आप साहित्यकार को कदापि दोषी नहीं करार दे सकते। वह तो समाज का पहरेदार होता है। वह समाज को सावधान करता रहता है–

''ऊँघता नेतृत्व, पहरेदार भी सोये मगर।
लेखनी वाले निरन्तर जागरण करते रहे।''

इस सबके बावजूद सामाजिक/राजनैतिक/नैतिक स्थितियों में पतन होता हैं। अनेक बार कवि भी उसी रास्ते पर चल पडता है पर विवेकशील रचनाकार समाज को झकझोरते रहते है। साहित्य का अर्थ ही यही है कि जो समाज का हित धारण करे।

❑❑❑

परिशिष्ट ग्रन्थ सूची :

आधार ग्रन्थ सूची :

१. मेंहदी रची हथेली- चन्द्रसेन विराट, गिरधर प्रकाशन गुरूद्वारा रोड, करोल बाग, दिल्ली, १९६५

२. ओ मेरे अनाम- चन्द्रसेन विराट,लोकचेतना प्रकाशन, जबलपुर १९६८

३. स्वर के सोपान- चन्द्रसेन विराट, साहित्य भारती प्रकाशन, बम्बई, १९९६

४. किरण के कशीदे- चन्द्रसेन विराट, सरल प्रकाशन, दिल्ली, १९७४

५. मिट्टी मेरे देश की- चन्द्रसेन विराट, प्रगति प्रकाशन, आगरा १९७८

६. पीले चावल द्वार पर- चन्द्रसेन विराट, ममता प्रकाशन,इलाहाबाद, १९७७

७. दर्द कैसे चुप रहे - चन्द्रसेन विराट, इन्द्रप्रस्थ प्रकाशन, दिल्ली,१९७६

८. भीतर की नागफनी- चन्द्रसेन विराट, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली,१९७७

९. पलकों में आकाश- चन्द्रसेन विराट, प्रगति प्रकाशन, आगरा १९७८

१०. बूँद-बूँद पारा- चन्द्रसेन विराट, चित्रलेखा प्रकाशन, इलाहाबाद,१९७९

११. सन्नाटे की चीख- चन्द्रसेन विराट, संवेदना प्रकाशन, कासिमपुरा पावर हाउस, अलीगढ,१९९६

१२. गाओ कि जिये जीवन- चन्द्रसेन विराट, लाजपत नगर,साहिबाबाद, २००३

१३. सरगम के सिलसिले-२००८

१४. ओ गीत के गरूड- २०१२

आधार ग्रन्थ (मुक्तक संग्रह)

१. कुछ छाया कुछ धूप- चन्द्रसेन विराट, लोकवाणी संस्थान, अशोक नगर, दिल्ली,१९९८

२. कुछ पलाश कुछ पाटल- चन्द्रसेन विराट,दिशा प्रकाशन, त्रिनगर दिल्ली

३. कुछ सपने कुछ सच- चन्द्रसेन विराट, दिशा प्रकाशन, त्रिनगर दिल्ली

४. कुछ अंगाारे कुछ फुहारें- चन्द्रसेन विराट, दिशा प्रकाशन, त्रिनगर दिल्ली, २००७

५. कुछ मिश्री कुछ नीम - चन्द्रसेन विराट, दिशा प्रकाशन, त्रिनगर दिल्ली, २००९

६. कुछ लोहा कुछ मोम - चन्द्रसेन विराट, दिशा प्रकाशन, त्रिनगर दिल्ली, २०१३

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :

१. महादेवी का विवेचनात्मक गद्य- पृष्ठ १४१

२. गोस्वामी तुलसीदास- पृष्ठ ८६

३. काव्य रूपों के मूल स्त्रोत ओर उनका विकास- श्शकुन्तला दुबे- पृष्ठ २७९
४. आधुनिक हिन्दी गीतिकाव्य का स्वरूप और विकास- डॉ. आशा किशोर- पृष्ठ ५५
५. हिन्दी गीतिकाव्य: उद्‌भव और विकास और भारतीय काव्य में इसकी परम्परा (अमुद्रित) पृष्ठ ३०८
६. गीतिकाव्य : पृष्ठ १८१
७. हिन्दी गजल: चन्द्रसेन विराट, सम्पादन- पुरूषोत्तम प्रेमी, सुरेश श्रीवास्तव, जगदीश पंड्या
८. अपरा-निराला-भारती भण्डार लीडर भवन ३ लीडर मार्ग, इलाहाबाद, १९८९
९. अरस्तु का काव्यशास्त्र- डॉ. नगेन्द्र, हिन्दी अनुसंधान परिषद दिल्ली
१०. अंलकार विमर्श- कृष्णनारायण प्रसाद, साथी प्रकाशन सागर, १९६६
११. आधुनिक कविता की प्रमुख प्रवृतियाँ- डॉ. नगेन्द्र, गौतम बुक डिपो, दिल्ली, १९९१
१२. आधुनिक बोध, दिनकर, हिन्दी बुक सेन्टर, नई दिल्ली,१९७३
१३. कला और संस्कृति, डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल, साहित्य भवन लिमि., प्रयाग, १९५२
१४. काव्य तत्व विमर्श- डॉ. राममूर्ति त्रिपाठी, कोणार्क प्रकाशन, नई दिल्ली,१९९०
१५. नए साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र- गजानन माधव मुक्तिबोध, राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली, १९९१
१६. पल्लव- सुमित्रानन्दन पंत, भारती भण्डार, प्रयाग, २००५
१७. पाश्चात्य काव्य शास्त्र के सिद्धान्त- डॉ. शान्तिस्वरूप गुप्त- अशोक प्रकाशन, दिल्ली, १९७०
१८. भारतीय काव्य शास्त्र- डॉ. राजवंश सहाय हीरा, बिहार हिन्दी अकादमी, पटना, १९७६
१९. विराट विमर्श- सम्पादक डॉ. अनन्तराम मिश्र, लोकवाणी संस्थान, अशोक नगर, दिल्ली, २००४
२०. वृहत हिन्दी कोष - कालिकाप्रसाद- ज्ञानमण्डल लिमिटेड वाराणसी, १९९१
२१. समसामयिकता और हिन्दी कविता- डॉ. रघुवंश- केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा, १९७२
२२. साहित्य वर्चस्व और प्रतिरोध- डॉ. सुरेश गौतम, शब्द सेतु, दिल्ली,२००२
२३. नए साहित्य का सौन्दर्य शास्त्र- मुक्तिबोध
२४. शुद्ध कविता की खोज, दिनकर
२५. देवराज पथिक, नयी कविता में राष्ट्रीय चेतना, पृष्ठ-२१
२६. गोपीनाथ श्रीवास्तव- हिन्दी अंग्रेजी थेसारस- पृष्ठ-१९
२७. राजनारायण पुर्ननवा: चेतना और शिल्प

२८. समकालीन कविता में लोकचेतना– डॉ. सत्यनारायण स्नेही

२९. भूमण्डलीकरण और समकालीन हिन्दी कविता– डॉ. श्याम बाबू शर्मा

३०. समकालीन हिन्दी कविता की नयी सोच – डॉ. पद्मजा घोरपडे

३१. हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास– रामस्वरूप चतुर्वेदी, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद

३२. समकालीन कविता की भूमिका– डॉ. मोहन, अनंग प्रकाशन, दिल्ली–२००५

३३. समकालीन कविता और सौन्दर्यबोध, रोहिताश्व, वाणी प्रकाशन, दिल्ली

३४. समकालीन कविता का बीजगणित– कुमार कृष्ण, वाणी प्रकाशन, दिल्ली

३५. समकालीन कविता की भूमिका– डॉ. विश्वम्भर नाथ उपाध्याय एवं मंजुल उपाध्याय, मैक मिलन प्रकाशन, दिल्ली

३६. समकालीन कवि एक अंत:सूत्र– डॉ. रतन कुमार पाण्डेय,ग्रंथ रत्नाकर, मुम्बई

३७. समकालीन कवि दृष्टि और बोध– रतन कुमार पाण्डेय, अनंग प्रकाशन, दिल्ली, २००२

३८. समकालीन कविता एक विश्लेषण, अशोक सिंह, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद

३९. समकालीन हिन्दी कविता की संवेदना–डॉ. गोविन्द रजनीश, साहित्यागाार प्रकाशन, जयपुर

४०. समकालीनता और शाश्वतता– रोहिताश्व, विद्या प्रकाशन, कानपुर

४१. समकालीन हिन्दी कविता,अज्ञेय और मुक्तिबोध, डॉ. शशि शर्मा, वाणी प्रकाशन, दिल्ली

४२. समकालीन साहित्य एक नई दृष्टि– इन्द्रनाथ मदान, लिपि प्रकाशन, दिल्ली

४३. समकालीन सृजन संदर्भ– भारत भारद्वाज, वाणी प्रकाशन, दिल्ली

४४. समकालीन काव्य यात्रा– नंद किशोर धवल, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली

४५. समयिक परिवर्तन में साहित्य की भूमिका– डॉ. रतन कुमार पाण्डेय,संजय बुक सेंटर, वाराणसी

४६. कविता के नए प्रतिमान– डॉ. नामवर सिंह , राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली

४७. कविता क्या है– विश्वनाथ प्रसाद तिवारी– राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली

४८. आधुनिक हिन्दी कविता– डॉ. कृष्णचन्द्र वर्मा

४९. साहित्य का नया परिप्रेक्ष्य

५०. समसामयिकता और हिन्दी कविता– डॉ. रघुवंश

५१. वृहत हिन्दी कोष– कालिकाप्रसाद– ज्ञानमंडल लिमिटेड, वाराणसी

५२. हिन्दी विश्वकोश– खण्ड तीन– सम्पादक रामप्रसाद त्रिपाठी– नागरी प्रचारिणी सभा वाराणसी

५३. भारतीय काव्य शास्त्र- डॉ. अशोक के श्शाह

५४. समकालीन कविता के आयाम- सम्पादक पी. रवि, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद

५५. विराट वैभव (गीत, गजल, मुक्तक) १९९९

५६. चन्द्रसेन विराट के प्रतिनिधि गीत- १९९९

५७. विराट विमर्श - समीक्षा ग्रन्थ २००४

५८. चन्द्रसेन विराट का काव्य- समीक्षा ग्रन्थ- २००६

५९. चन्द्रसेन विराट -२०११

६०. हिन्दी कविता का अतीत और वर्तमान- मैनेजर पाण्डेय,वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली

६१. हमारे लोकप्रिय गीतकार- दुष्यन्त कुमार

६२. समकालीन कविता: नये प्रस्थान- परमानन्द श्रीवास्तव, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली

६३. नयी कविता: अनुभूति और संस्कृति - डॉ. राजकुमारी पाठक,जवाहर पुस्तकालय,मथुरा

६४. साहित्य का समाजशास्त्र- डॉ. दयानन्द तिवारी, प्रकाशन संस्थान, नयी दिल्ली

६५. समकालीन कविता के हस्ताक्षर- डॉ. गीता सिंह- विश्वभारती प्रकाशन

सहायक एवं सदर्भित पत्रिकाएँ :

१. अवध अर्चना- सम्पादक विजय रंजन, अंक- अप्रैल, जून १९९७।

२. संकल्प रथ- सम्पादक रामधारी- सितम्बर,२००४

३. साहित्य सरोवर, सम्पादक कमलकान्त- विराट विशेषांक, दिसम्बर,२००१

४. सोच- सम्पादक सुभाष गौतम, डॉ. विष्णु भटनागर (श्री विराट पर केन्द्रित अंक), अंक- दो, प्रकाशन वर्ष अमुद्रित।

५. नवनीत

६. आजकल

७. हंस

८. वागर्थ

९. आवेग-१३

१०. अमर उजाला, चण्डीगढ ९ सितम्बर २००० पृष्ठ-१५

११. अलाव

१२. समकालीन भारतीय साहित्य अंक १४७

१३. आलोचना, सहस्राब्दी अंक २३

१४. अनभै

१५. पहल

१६. ज्ञान गरिमा सिंधु

१७. करूणावती

१८. ज्ञानोदय

१९. प्रतिमान- वाणी प्रकाशन

२०. परिकथा

२१. दस्तावेज

२२. साहित्य सागर - कमलकान्त- हिन्दी गजल विशेषांक- अप्रैल २००२ और २००४

२३. धर्मयुग

२४. सरिका

२५. हिन्दी नवचेतना

❑❑❑

विषयानुक्रमणिका

क्रमांक संख्या	शीर्षक	पृष्ठ संख्या
	प्राक्कथन विषय प्रवेश प्रस्तावना	१ ३ ५
प्रथम अध्याय	हिन्दी गीत का उद्गम और विकास यात्रा	७–२९
द्वितीय अध्याय	छायावादोत्तर हिन्दी गीतों में समकालीन दृष्टिकोण	३०–४५
तृतीय अध्याय	श्री चन्द्रसेन विराट का व्यक्तित्व और रचनाधर्मिता की प्रेरणा अद्यतन प्रकाशित काव्य कृति परिचय	४६–५८
चतुर्थ अध्याय	श्री चन्द्रसेन विराट : कृतित्व समीक्षा	५९–८९
पंचम अध्याय	श्री चन्द्रसेन विराट के गीतों का कला पक्ष	९०–१०२
षष्ठ अध्याय	आधुनिक हिन्दी गीतकार और चन्द्रसेन विराट के गीत	१०३–१०९
सप्तम् अध्याय	श्री चन्द्रसेन विराट के गीतों में समसामयिक चिन्तन एवं चेतना की अभिव्यक्ति	११०–११९
अष्टम् अध्याय	श्री चन्द्रसेन विराट का गीत विधा को प्रदेय	१२०–१२६
	साक्षात्कार प्रश्नावली परिशिष्ट ग्रन्थ सूची आधार ग्रन्थ सूची सहायक एवं सन्दर्भित पत्र–पत्रिकायें	१२७ १३१ १३१ १३४